इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDG -173
समाचार पत्र और फीचर लेखन

खंड

3

विशिष्ट वर्गों के लिए लेखन

इकाई 12
महिलाओं के संबंध में लेखन 231

इकाई 13
बच्चों के संबंध में लेखन 254

इकाई 14
किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लेखन 271

इकाई 15
शहरी वर्ग के लिए लेखन 289

इकाई 16
ग्रामीण वर्ग के लिए लेखन 311

खण्ड 3 परिचय

'समाचार पत्र और फीचर लेखन' के पाठ्यक्रम का यह तीसरा खंड है। इस खण्ड में कुल पाँच इकाइयाँ हैं। इकाई संख्या 12 से इकाई संख्या इकाई संख्या 16 तक। इकाई संख्या 12 महिलाओं के सम्बन्ध में फीचर लेखन से सम्बन्धित है। इस इकाई में महिला लेखन के परिप्रेक्ष्य के साथ ही महिला लेखन के प्रचलित दृष्टिकोणों पर भी विचार किया गया है। इसमें इस बात की भी चर्चा की गई है कि विषय का चयन और सामग्री का संकलन किस प्रकार किया जाए। इसमें लेखन के व्यावहारिक पक्ष पर भी विचार किया गया है।

इकाई 13 'बच्चों के सम्बन्ध में लेखन' से सम्बन्धित है। इस इकाई में बच्चों के लिए और बच्चों के सम्बन्ध में लेखन का अन्तर स्पष्ट किया गया है। साथ ही बच्चों से सम्बन्धित फीचर लेखन के विभिन्न क्षेत्रों का परिचय देते हुए यह बताया गया है उन पर फीचर कैसे लिखें और प्रस्तुत करें।

इकाई 14 'किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लेखन' से सम्बन्धित है। इस इकाई में इन वर्गों के लिए लेखन का महत्व तो बताया ही गया है, साथ ही लिखने की योग्यता पर भी विचार किया गया है। इन वर्गों पर लिखते हुए किन–किन बातों का ध्यान विशेष रूप से रखना चाहिए, इसकी भी विस्तृत चर्चा की गई है।

इकाई 15 'शहरी वर्ग के लिए लेखन' से सम्बन्धित है। इस इकाई में शहरी जीवन, शहरी जीवन के संग्रह, लोकाचार, मलिन बस्तियों, शहरी नियोजन और कामकाजी जीवन आदि की गम्भीर चर्चा के साथ–साथ इस विषय पर फीचर लिखने के लिए आवश्यक योग्यता पर भी विचार किया गया है। इस इकाई में इस तरह के लेखन की आवश्यकता और महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

इकाई 16 'ग्रामीण वर्ग के लिए लेखन' से सम्बन्धित है। इस इकाई में ग्रामीण जीवन की समस्याओं पर विचार किया गया है। इसमें विस्तार से यह बताया गया है कि ग्रामीण जीवन पर केन्द्रित या उससे सम्बन्धित फीचर में क्या–क्या बातें होनी चाहिए। सभी इकाइयों में बोध प्रश्न और अभ्यास के लिए प्रश्न दिए गए हैं। इन्हें हल करके अपने अध्ययन और अपनी तैयारी का पता स्वयं लगा सकते हैं। इन सभी इकाइयों के गहन अध्ययन के बाद निश्चय ही आप इन विषयों पर लिखने में सहजता का अनुभव करेंगे।

इकाई 12 महिलाओं के संबंध में लेखन

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 महिला लेखन का परिप्रेक्ष्य

12.3 महिला लेखन के प्रचलित दृष्टिकोण

- 12.3.1 स्त्रीवादी दृष्टिकोण
- 12.3.2 पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण
- 12.3.3 मार्क्सवादी दृष्टिकोण

12.4 विषय का चयन

- 12.4.1 रुचि और विशेषज्ञता
- 12.4.2 लेखन का उद्देश्य और प्रासंगिकता
- 12.4.3 पाठक वर्ग
- 12.4.4 प्रकाशन की प्रकृति

12.5 सामग्री का संकलन

- 12.5.1 विषय पर शोध
- 12.5.2 तथ्यों का संकलन
- 12.5.3 साक्षात्कार
- 12.5.4 फोटो और अन्य सामग्री

12.6 सामग्री का संयोजन और संपादन

12.7 फीचर का लेखन

- 12.7.1 आरंभ
- 12.7.2 मध्य
- 12.7.3 अंत
- 12.7.4 शीर्षक

12.8 भाषा–शैली

12.9 सारांश

12.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

यह इस पाठ्यक्रम के तीसरे खंड की पहली इकाई है। इस इकाई में आप महिला लेखन और महिलाओं के सम्बन्ध में लेखन के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षों का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- महिला लेखन के परिप्रेक्ष्य और विभिन्न दृष्टिकोणों से परिचित हो सकेंगी/सकेंगे;
- महिलाओं के संबंध में लेखन के लिए सही विषय का चयन कर सकेंगी/सकेंगे;
- लेखन के लिए आवश्यक सामग्री का संकलन कर सकेंगी/सकेंगे;
- संकलित सामग्री का संपादन और संयोजन कर सकेंगी/सकेंगे;

- महिलाओं से संबंधित फीचर लिखने की कुशलता का विकास कर सकेंगी/सकेंगे, और
- फीचर का उचित शीर्षक दे सकेंगी/सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

समाचार–पत्र और फीचर लेखन से संबंधित व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम की इस इकाई में आप महिला लेखन के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षों की जानकारी प्राप्त करेंगे। महिला लेखन के विषय का चयन कैसे किया जाए, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। महिलाओं के विषय में लिखते हुए यह ध्यान रखना चाहिए कि वहां कोई विषय ऐसा नहीं हो, जिस पर न लिखा जा सके। विषय का चयन करते हुए लेखक की रुचि, विशेषज्ञता का क्षेत्र, लेखन का उद्देश्य, पाठक–वर्ग और पत्र–पत्रिका का स्वरूप–इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। इकाई में इन सभी पक्षों की विस्तार से चर्चा की गई है। विषय का चयन करने के बाद उससे संबंधित सामग्री का संकलन आवश्यक है। इसके लिए आवश्यक शोध, तथ्यों का संकलन, संबंधित लोगों से साक्षात्कार, फोटो आदि एकत्र करना चाहिए। बिना पूर्ण तैयारी के फीचर लिखना उचित नहीं है। ऐसा फीचर प्रभावशाली नहीं हो सकता। फीचर लिखना आरंभ करने से पूर्व उसकी रूपरेखा बना लेनी चाहिए और यह तय कर लेना चाहिए कि फीचर के आरंभ मध्य और अंत में क्या होगा और ये अंश कैसे लिखे जाएंगे। फीचर लेखन के इन सभी व्यावहारिक पक्षों का विस्तार से विवेचन किया गया है और उदाहरणों के द्वारा प्रत्येक बात को स्पष्टता से समझाया गया है। इकाई में दिए गए अभ्यासों द्वारा आप महिला लेखन में अपनी कुशलता का विकास कर सकेंगे।

12.2 महिला लेखन का परिप्रेक्ष्य

महिलाओं पर लिखते समय सबसे पहली चीज यह है कि उनके बारे में बने–बनाए मिथकों को तोड़ा जाए। उनके जीवन पर रहस्य का जो पर्दा पड़ा हुआ है उसे हटाया जाए। उनकी पहचान और सम्प्रेषण के नए–पुराने रूपों को जाना जाए। भारतीय स्त्री की आधुनिक छवि और आधुनिक चेतना के निर्माण में महात्मा गांधी के नेतृत्व में चले स्वाधीनता संग्राम, महिला आन्दोलन, विश्वव्यापी महिला जागरण की लहर और समाजवादी विचारों की केन्द्रीय भूमिका रही है। महिला आन्दोलन के विकास पर स्त्री जागरूकता का सारा दारोमदार टिका है। यह संभव ही नहीं है कि महिलाओं के हितों की रक्षा के संघर्ष के बिना महिला जागरण पैदा हो। महिला आन्दोलन वास्तविक अर्थों में स्त्री जागरण की धुरी है। महिला आन्दोलन के विकास के लिए जनतंत्र का चौतरफा विकास करना जरूरी है। पितृसत्तात्मक मूल्यों और संरचनाओं के प्रति जागृति पैदा की जानी चाहिए। स्त्री अस्मिता के निर्माण के लिए पहली शर्त है कि स्त्री–पुरुष के बीच समानता की धारणा को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में किया जाए। उन तमाम सवालों, स्थितियों और संरचनाओं को चुनौती दी जाए जो स्त्री–पुरुष के बीच असमानता की खाई पैदा करते हैं।

परंपरागत नजरिए से स्त्री को सौन्दर्य, प्रकृति, पवित्रता, अच्छाई, अनुकरणकर्ता के रूप में महिमामंडित किया गया है। इसके अलावा स्त्री के प्रति हमारे समाज में अनेक निषेध प्रचलन में हैं। स्त्री के लिए प्रचारित निषेधों के कारण उसका सामाजिक दायरा संकुचित हुआ है। स्त्री को पुरुष संदर्भ के जरिए परिभाषित करने की परंपरा चल

निकली, जिसके कारण स्त्री के प्रति परंपरागत और रूढ़िवादी नजरिए का प्रयोग किया जाता रहा है। स्त्री की आधुनिक पहचान के लिए जरूरी है कि उसे स्त्री–संदर्भ में देखा जाए उसके जीवन के अन्तर्विरोधों की स्त्री–संदर्भ में मीमांसा की जाए। उसके पराश्रित भाव को चुनौती दी जाए। मां, बहन, पत्नी से पहले वह स्त्री है, इंसान है, व्यक्ति है। इसके लिए जरूरी है कि स्त्री की अस्मिता को तयशुदा स्त्री–पहचान के रूपों से बाहर लाकर चित्रित किया जाए। यह भी ध्यान रहे कि स्त्री का संघर्ष बहुआयामी होता है। उसे कभी एकायामी नजरिए से नहीं देखना चाहिए। सामान्य तौर पर जिन चीजों को छोटा मानकर अमूमन उपेक्षा की जाती है, स्त्री के लिए वे चीजें महत्वपूर्ण होती हैं। स्त्री अस्मिता का संघर्ष छोटे–छोटे मसलों में ही सबसे पहले अभिव्यक्ति पाता है। उसकी जिन्दगी की छोटी–छोटी ख्वाहिशें, छोटी–छोटी चीजों की इच्छाएं बड़े परिवर्तनों को जन्म दे सकती हैं।

स्त्री की पहचान को स्थापित करने के संघर्ष का पहला चरण वह है जिसमें स्त्री अपने को अभिव्यक्त करे। दूसरा चरण वह है जिसमें वह लिखे। ये दोनों चरण क्रमशः और एक साथ चल सकते हैं। इस क्रम में स्त्री अपना सामाजिक स्थान बनाती है, समाज में अपनी जगह बनाती है, निजी को सामाजिक करती है। इसका अर्थ यह है कि स्त्री संबंधी विषयों पर लिखते समय कोशिश होनी चाहिए कि स्त्री ज्यादा से ज्यादा अपने को व्यक्त करे। पुरुष जिन सवालों को महत्वपूर्ण मानता है, जरूरी नहीं है कि स्त्रियों के लिए भी वे उतने ही महत्वपूर्ण हों।

स्त्री पर फीचर लिखते समय यथार्थ के एकायामी चित्रण की बजाय समग्र स्त्री रूप पर जोर दिया जाना चाहिए। स्त्री के सार्वभौम रूप की बजाय विशिष्ट रूप पर जोर दिया जाना चाहिए। स्त्रियों में अनेक सामाजिक वर्ग हैं। इनमें स्वभावगत, मूल्यगत और संस्कारगत अंतर होता है। इस भिन्नता को ओझल नहीं करना चाहिए। स्त्री को मूलतः लैंगिक के रूप में देखना चाहिए। लिंग या लैंगिकता का अंग्रेजी में पर्यायवाची शब्द है। जेंडर, इसके पर्यायवाची के रूप में 'सेक्स' (यौन), 'सेक्सुअल डिफरेंस' (लैंगिक या यौन भिन्नता) पदबंधों का इस्तेमाल किया जाता है। इतिहासकारों में लैंगिक अध्ययन की परंपरा बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में शुरू हुई। इसके पहले ऐसे अध्ययन की परंपरा का जिक्र नहीं मिलता। साहित्य में लैंगिक अध्ययन पहले शुरू हुआ, समाजविज्ञान में इसका प्रयोग बाद में हुआ। स्त्री के संदर्भ में लिंग पदबंध का ज्यों ही इस्तेमाल करते हैं इससे कई अर्थ व्यंजित होते हैं। पहला यह कि लिंग एक नहीं दो हैं। उनमें भी फर्क होता है। दूसरा अर्थ यह व्यंजित होता है लिंग सामाजिक संबंधों को व्यक्त करता है। तीसरा अर्थ व्यक्त होता है कि इसमें उभयलिंगी अन्तर्विरोध निहित है।

प्रसिद्ध नारीवादी लुइस इरीगरी ने लिखा है 'नई स्त्री न तो बंद है और न खुली है। वह अनिश्चित है, अधूरी है या यूं कहें कि कभी पूरी थी ही नहीं। उसकी अपनी कोई इकाई भी नहीं थी। उसकी इमेज बनाने वाली अनेक चीजें हैं जिनमें उसका पूरा नाम, उसका अजनबीपन आदि सहज पहचान के आधार हैं। अधूरे रूप के कारण ही वह कभी भी कुछ भी बन जाती है। उसे किसी भी रूप के जरिए पूरा नहीं किया जा सकता। बल्कि वह तो ऐसी चीज का विस्तार है जिसे किसी ने देखा ही नहीं है और न वह कभी वैसी होगी। 'इरीगैरय' ने यह भी लिखा कि 'जब वह किसी जगह हस्तक्षेप करती है तो उसे लिपिबद्ध करना बेहद कठिन होता है। उसने कभी स्त्री की तरह देखा नहीं, स्त्री के प्रति अन्यमनस्क रही, अतः उसमें पुनः स्त्री की संवेदनाएं पैदा करना, निर्णायक हस्तक्षेप के बिना संभव ही नहीं है।'

12.3 महिला लेखन के प्रचलित दृष्टिकोण

स्त्रियों पर लिखते समय उनके बारे में प्रचलित विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में जान लेना उचित होगा। इनमें नारीवादी दृष्टिकोण, पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण, मार्क्सवादी दृष्टिकोण प्रमुख हैं।

12.3.1 स्त्रीवादी दृष्टिकोण

फीचर लेखन में नारीवादी नजरिए से देखने का अर्थ है स्त्री–पुरुष के बीच समानता की बात करना, स्त्री को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के समान मानना। लिंगभेद के सभी रूपों का विरोध करना। नारीवादी नजरिए के प्रतिपादकों में अनेक किस्म के चिंतकों के नाम लिए जाते हैं। नारीवाद की धारणाओं के निर्माण में सारी दुनिया में 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से प्रयास हो रहे हैं। नारीवाद की विभिन्न अवधारणाओं का महिला आन्दोलन, मजदूर आन्दोलन और महिला जागृति के प्रयासों के साथ गहरा संबंध है। महिला आन्दोलन ने सबसे पहले स्त्री शोषण, उत्पीड़न और विषमता के सवालों को केन्द्रीय महत्व दिया।

इस प्रसंग में जॉन स्टुअर्ट मिल की किताब 'दि सब्जेक्शन ऑफ वीमेन' (1869) का प्रमुख स्थान है। सन् 2002 में यह पुस्तक हिन्दी में 'स्त्रियों की पराधीनता' शीर्षक से प्रकाशित हुई है। मिल ने स्त्री की दशा को गुलामों की अवस्था से भी बदतर पाया। स्त्री पर पुरुष आधिपत्य के पक्ष में आम धारणा यह है कि यह आधिपत्य बल के नियम से नहीं, बल्कि स्वेच्छा से स्वीकारा जाता है। मिल ने इस धारणा का खंडन किया है। मिल का मानना है कि स्त्रियों में जब से शिक्षा का प्रचार हुआ है और वे लेखन के क्षेत्र में आई हैं तब से उन्होंने बड़ी तादाद में अपनी वर्तमान अवस्था के खिलाफ विरोध दर्ज किया है। ज्ञान के प्रसार के साथ ही महिलाओं में 'इच्छा' जैसी किसी चीज ने जन्म लिया और उसकी रक्षा करने और उसे बचाने के लिए महिलाएं आगे आईं। इसके पहले तो स्त्री की 'इच्छा' और 'मन' जैसी किसी चीज का अस्तित्व ही नहीं था। वह सिर्फ 'देह' थी।

स्त्रियों के सामाजिक शोषण की प्रकृति एकदम भिन्न रही है। मिल ने लिखा है कि 'सामाजिक व प्राकृतिक–सभी कारण मिलकर यह असंभव कर देते हैं कि महिलाएं संगठित तौर पर पुरुषों की सत्ता का विरोध कर सके। वे अन्य पराधीन वर्गों से भिन्न स्थिति में हैं कि उनके मालिक उनसे वास्तविक सेवा के अतिरिक्त कुछ और भी चाहते हैं। पुरुष केवल महिलाओं की पूरी–पूरी आज्ञाकारिता ही नहीं चाहते, वे उनकी भावनाएं भी चाहते हैं। सबसे क्रूर और निर्दयी पुरुष को छोड़कर सभी पुरुष अपनी निकटतम संबंधी महिला में एक जबरन बनाए गए दास की इच्छा रखते हैं सिर्फ एक दास नहीं, बल्कि अपना प्रिय, अपना चहेता व्यक्ति चाहते हैं। अतः उन्होंने महिलाओं के मस्तिष्क को दास बनाने के लिए हर चीज का इस्तेमाल किया है। अन्य दासों के मालिक आज्ञाकारिता बनाए रखने के लिए भय का प्रयोग करते हैं–उनका खुद का भय या फिर धार्मिक भय। स्त्रियों के मालिक साधारण आज्ञाकारिता से कुछ अधिक चाहते थे और उन्होंने शिक्षा के पूरे बल का इस उद्देश्य के लिए इस्तेमाल किया।"

महिलाओं पर फीचर लिखते समय बुनियादी तौर पर यह ध्यान रखना चाहिए कि उसमें स्त्रियों के विचार व्यक्त हों। स्त्रियों के बारे में सारी दुनिया में व्यापक चर्चा होने के बावजूद आज भी हम उनके बारे में बहुत कम जानते हैं। नारीवादी नजरिए से स्त्री

को चित्रित करने का अर्थ है कि उनके सवालों को पुरुष संदर्भ में रखकर न देखा जाए। स्त्री के मन, तन, परिवेश को स्त्री–संदर्भ में रूपायित किया जाए। इस तरह के फीचर लेखन में स्त्री और पुरुष का आसपास फैले हुए आक्रामक परिवेश के साथ अनुकूलन के लिए तैयार करने की प्रक्रिया से बचा जा सकता है। यह तभी संभव है जब उसे लैंगिक दृष्टि से देखा जाए। इसी रूप में उसके स्वायत्त विकास, स्वतंत्र परिवेश के निर्माण की कोशिश की जाए। आमतौर पर महिला के लिए फीचर लेखन के तहत जिस तरह की सामग्री पत्र–पत्रिकाओं में निकलती है लगभग उन सबमें स्त्री को अनुकूलित करने का प्रयास दिखाई देता है। ज्यादातर लोकप्रिय पत्रिकाएं यही कर रही हैं। सीमोन द बोउआर ने अपनी पुस्तक 'स्त्री उपेक्षिता' में लिखा है, 'अपने हृदय की भावनाओं को, अपने को व्यक्त करने के लिए स्त्री के पास मुश्किल से ही कोई साधन होता है। अपनी मानसिक अवस्था के अनुसार ही वह अपनी भावनाओं को भिन्न–भिन्न रूपों में देखती है। चूंकि स्त्री मौन समर्पण करती है, इसलिए उसका एक निष्कर्ष उतना ही सच्चा होता है जितना कि दूसरा। बोउआर ने यह भी लिखा कि 'स्त्री का शरीर प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं और न केवल स्त्री का पत्नी और माता के रूप में कार्य करना ही स्त्री होने का सही परिचय है। काम–क्रिया और मातृत्व धारण करने के नाते स्त्री अपने को एक स्वतंत्र व्यक्ति कह सकती है परंतु सच्चे रूप में स्त्री होने के लिए उसे अन्य रूप में मानना ही पड़ेगा। आज के पुरुष स्त्री के प्रति दोहरा दृष्टिकोण रखते हैं। वे स्त्री को अपने बराबर के साथी के रूप में देखना चाहते है और साथ ही उसे गौण भी मानते हैं। इन दोनों विचारों में एकरूपता नहीं है। स्त्री इन दोनों विचारों के बीच पिसती है।' (सीमोन द बोउआर, स्त्री उपेक्षिता, प्रभा खेतान (अनुवादक), हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली, दूसरा संस्करण, 1992, पृ. 119)

12.3.2 पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण

फीचर लेखन में पितृसत्तात्मक नजरिए से बचा जाना चाहिए। सन् 1884 में प्रकाशित फ्रेडरिक एंगेल्स की कृति 'परिवार, राज्य और व्यक्तिगत संपत्ति' में पहली बार सुसंगत तरीके से पितृसत्ता की आलोचना सामने आई। एंगेल्स ने लिखा कि 'मातृसत्ता का विनाश नारी जाति की विश्व ऐतिहासिक महत्व की पराजय थी। जब घर के अंदर भी पुरुष ने अपना आधिपत्य जमा लिया, नारी पदच्युत कर दी गई। वह जकड़ दी गई। वह पुरुष की वासना की दासी, संतान उत्पन्न करने का एक यंत्र बनकर रह गई। बाद में धीरे–धीरे तरह–तरह के आवरणों से ढककर, सजाकर और आंशिक रूप में थोड़ी नरम शक्ल देकर उसे पेश किया जाने लगा, पर वह कमी दूर नहीं हुई। एंगेल्स ने यह भी लिखा, 'पितृसत्ता का सबसे अधिक एवं पहला प्रभाव परिवार में पड़ा। एकनिष्ठ परिवार का उदय हुआ। यह एकनिष्ठ परिवार असमान–संबंध बनाए रखता है। लिंगभेद बनाए रखता है। यह केवल नारी के लिए एकनिष्ठ है, पुरुष के लिए नहीं और आज तक उसका यही स्वरूप चला आया है। एंगेल्स ने पितृसत्ता के उदय को व्यक्तिगत संपत्ति के उदय से भी जोड़ा। कमला भसीन ने 'ह्वाट इज पैट्रिआर्चीय' (1994) कृति में लिखा कि पितृसत्ता का अर्थ है –पिता का शासन अथवा पुरुषों का शासन। इसमें परिवार के सभी सदस्य पुरुष के मातहत होते हैं। खासकर औरत को मातहत जीवन जीना होता है। पितृसत्तात्मक समाज का अर्थ है पुंसवादी समाज, पुरुष वर्चस्व प्रधान समाज। जीवन की प्रत्येक घटना, विचार, संस्कार, मूल्य, रवैये आदि को पुंसवादी नजरिए से देखने का अर्थ है पितृसत्तात्मक नजरिए से दुनिया को देखना।' केट मिलेट ने 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स' (1970) में लिखा कि पितृसत्तात्मक दृष्टि से स्त्री का अर्थ है– पैसिव (ठंडी) या निष्क्रिय। यही आदर्श स्त्री है। जबकि सक्रिय (ऐक्टिव)

पुरुष को नॉर्मल माना जाता है। पुरुष में आक्रामकता, जिज्ञासा, महत्वाकांक्षा, जिम्मेदारी का भाव, मौलिकता, प्रतिस्पर्धी भाव, दृढ़ निश्चय एवं सुनियोजन का गुण होता है जबकि स्त्री आकर्षक, आज्ञाकारी, सहानुभूतिपरक, स्वीकृति के लिए प्रतिबद्ध, हंसमुख, विनम्र और मिलनसार होती है।' ए. रीच ने 'ऑफ वूमेन बार्न : मदरहुड ऐज एक्सपीरिएंस ऐंड इंस्टीट्यूशन' (1976) में लिखा कि पितृसत्ता पिता की सत्ता है। स्त्रियों के सामाजिक वैचारिक, राजनीतिक व्यवस्था में अधिकारों को पितृसत्ता के अनुसार तय किया जाता है। स्त्रियां कहां हिस्सा लें और कहां न लें और कैसे स्त्री सब जगह पुरुष की मातहत होकर रहे, यह पितृसत्ता की चिंता है। पितृसत्ता की व्याख्या करते हुए एस. फायरस्टोन ने लिखा कि पुनरुत्पादन के कारण औरत शोषित है। अब तक औरत की पुनरुत्पादन क्षमता का नियंत्रण पुरुष करता रहा है।

12.3.3 मार्क्सवादी दृष्टिकोण

मार्क्सवादी स्त्री विचारक मानती हैं कि स्त्री की पहचान के दो रूप हैं : लिंग और वर्ग। स्त्री में एक ही साथ इन दोनों रूपों को देखा जाना चाहिए। नारीवादी विचारकों से इनका बुनियादी फर्क यह है कि वे स्त्री को सिर्फ लिंग के रूप में या सिर्फ बायोलॉजिकल रूप में नहीं देखतीं। स्त्री के मार्क्सवादी नजरिए के निर्माण में मिशेल बरेट का प्रमुख अवदान है। मिशेल बरेट की धारणा है कि 'लिंग' का निर्माण करते समय पुरुष की यह कोशिश होती है कि वह लैंगिकता को नियंत्रित करे। लैंगिक सामाजिक विभाजन वस्तुतः श्रम विभाजन का ही एक रूप है। यह वर्गीकरण पुरुष के श्रेष्ठत्व और नियंत्रण को संभव बनाता है। मार्क्सवादी नारीवादी चिंतक स्त्री स्वायत्तता की धारणा को अस्वीकार करते हैं। वे सापेक्ष स्वायत्तता की धारणा को भी अस्वीकार करते हैं। अवागार्द चिंतक विचारधारा की भौतिकता पर जोर देते रहे हैं। मिशेल बरेट ने सवाल किया है कि ये लोग किससे स्वायत्तता चाहते हैं? बरेट ने लिखा 'विचारधारा की भौतिकता की धारणा आकर्षक और प्रभावशाली जरूर है, पर ये लोग विचारधारा को पूर्णतः स्वायत्त मानते हैं। ये लोग उत्पादन और पुनरूत्पादन का जीवन के साथ संबंध देख ही नहीं पाते। विचारधारा पर इस तरह बल देते हैं कि विचारधारा में सब कुछ भौतिक नजर आए। ये लोग विचारधारा को इतना वृहद रूप दे देते हैं कि उसमें कोई अर्थ बच ही नहीं जाता। कोई भी ऐसा उपकरण नहीं होता जिससे किसी भी चीज के बीच फर्क कर सकें। जब अर्थ भी भौतिक हो जाए तो भौतिकवाद का पदबंध स्वभावतः अपनी अर्थवत्ता खो देगा, अर्थहीन हो जाएगा।

मिशेल बरेट ने 'वूमेन्स ऑपरेशन टुडेः प्राब्लम्स इन मार्क्सिस्ट फेमिनिस्ट एनालिसिस' (1980) में लिखा कि स्त्री का उत्पीड़न कई तरह का होता है। उसे सिर्फ आर्थिक शोषण के संदर्भ में ही व्याख्यायित नहीं कर सकते। लैंगिक संबंधों को पूंजीवादी व्यवस्था ने असमान बना दिया है, उन पर हमला किया। अतः पूंजीवाद को खत्म किए बगैर लिंगभेद की समाप्ति संभव नहीं है। स्त्रियों का शोषण जरूरी नहीं है कि पूंजीवादी संबंधों के कारण ही हो, यह भी जरूरी नहीं है कि स्त्री का शोषण स्वतः व्यवस्था बदलते ही गायब हो जाए। मिशेल बरेट ने लिखा कि 'विचारधारा बौद्धिक अभ्यास मात्र नहीं है बल्कि ऐतिहासिक परिस्थितियों में निर्मित होती है और स्वायत्तता ग्रहण करती है।' फीचर लिखते समय इस दृष्टिकोण को भी दिमाग में अवश्य रखना चाहिए।

12.4 विषय का चयन

महिला लेखन से संबंधित किसी विषय के चयन का आधार क्या हो, इस मुद्दे पर हम इस भाग में विचार–विमर्श करेंगे। विषय का चयन करते हुए मुख्य बात जो ध्यान में रखने की है वह यह है कि उस विषय की प्रासंगिकता क्या है? क्या पाठक फीचर के इस विषय में रुचि लेंगे? साथ ही यह भी जरूरी है कि स्वयं आपके लिए यह विषय रुचिकर हो, आपका उस विषय पर पर्याप्त अध्ययन हो। इन्हीं सब पक्षों पर आगे हम विचार करेंगे।

12.4.1 रुचि और विशेषज्ञता

महिला लेखन की ओर उन्मुख होने वाले लेखक/लेखिका को चाहिए कि वह उसी क्षेत्र को चुने जिसमें उसकी रुचि हो। उदाहरण के लिए, किसी की रुचि समाजशास्त्रीय विषयों में हो सकती है, किसी की सांस्कृतिक विषयों में। महत्वपूर्ण यह है कि ऐसे किसी विषय को जहां तक संभव हो न चुनें जिसमें आपकी रुचि न हो। फीचर लेखक को अपना ज्ञान और अनुभव क्षेत्र विस्तृत रखना चाहिए। दूसरी बात जो ध्यान रखने की है, वह है विशेषज्ञता की। जिस विषय में आपकी रुचि हो, आपने अध्ययन किया हो, या जिसमें आपको विशेषज्ञता प्राप्त हो, उसे ही चुनें। जैसे, अगर आप किसी खास आदिवासी जाति की महिलाओं के बारे में फीचर लिखना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि आप आदिवासियों के संबंध में पर्याप्त अध्ययन करें। उस जाति विशेष के बारे में भी आपकी जानकारी हो। अगर ऐसा नहीं है और आप पहली बार आदिवासियों को अपने लेखन का विषय बनाना चाहते हैं, तो पहले उस बारे में पर्याप्त जानकारी हासिल कर लीजिए, तभी इस ओर उन्मुख होइए।

12.4.2 लेखन का उद्देश्य और प्रासंगिकता

किसी भी विषय का चयन करने से पूर्व यह विचार कर लीजिए कि आपने यही विषय क्यों चुना। इस विषय के द्वारा आप पाठकों तक क्या संदेश पहुंचाना चाहते हैं अर्थात् आपके लेखन का उद्देश्य और उसकी प्रासंगिकता क्या है? महिला लेखन के बारे में हम पिछली इकाई में बता चुके हैं कि आपके लेखन का उद्देश्य महिलाओं के बीच और महिलाओं के बारे में पूरे समाज में जागृति पैदा करना होना चाहिए। समाज में महिलाओं की वास्तविक स्थिति से लोगों को परिचित कराना, उनको समाज में बराबरी का दर्जा दिलवाना और उनके जीवन में सुधार और प्रगति लाने के लिए किए जा रहे प्रयत्नों को जनता तक पहुंचाना फीचर लेखन के उद्देश्य होने चाहिए। उदाहरण के लिए, आप अगर किसी ऐसी संस्था या महिला कार्यकर्ता का परिचय देते हैं जो दूरस्थ गांवों में रहने वाली निरक्षर महिलाओं में शिक्षा का प्रचार कर रही हैं तो आपका फीचर साक्षरता के प्रसार में मददगार साबित होगा क्योंकि यह संभव है कि आपका फीचर पढ़कर कुछ और युवक/युवतियां इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए प्रेरित हों। महिलाओं से संबंधित कोई समस्या चर्चा के केन्द्र में हो तो उस पर भी फीचर लिखा जा सकता है। जैसे, सांप्रदायिक उन्माद की वर्तमान स्थिति में सांप्रदायिक दंगों की शिकार महिलाओं पर फीचर तैयार किया जा सकता है।

12.4.3 पाठक वर्ग

फीचर के लिए विषय का चयन का एक आधार पाठक वर्ग भी है। विषय चुनते हुए यह भी विचार करें कि आप किसके लिए फीचर लिख रहे हैं। अगर आप सामान्य

पाठक के लिए लिख रहे हैं तो फीचर का विषय भी ऐसा चुनिए जो उसकी रुचि के अनुकूल हो। ऐसा विषय चुनने से पाठक की फीचर में रुचि जागृत होगी। उदाहरण के लिए, अगर आप शहरी मध्यवर्गीय लड़कियों/महिलाओं के लिए फीचर लिखना चाहती हैं तो महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर या व्यवसाय जैसे विषय रुचिकर हो सकते हैं। लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं है कि आप हमेशा पाठक की रुचि का ही ध्यान रखें, यह भी देखें कि आपके पाठकों को महिलाओं से संबंधित किन समस्याओं के प्रति जागरूक होना चाहिए। ऐसे विषयों पर भी फीचर तैयार कर सकते हैं। फीचर तैयार करते वक्त अपने पाठक की बौद्धिक–शैक्षिक स्थिति का ध्यान रखते हुए उसी के अनुकूल फीचर की भाषा–शैली तय करनी चाहिए। सामान्य पाठक वर्ग को आप बौद्धिक और जटिल विषय पर फीचर देंगे तो वह उसके लिए अरुचिकर होगा या विषय प्रासंगिक होते हुए भी शैली सुबोध और सरल नहीं होगी तो फीचर सामान्य पाठक के लिए ऊब पैदा करने वाला हो जाएगा।

12.4.4 प्रकाशन की प्रकृति

फीचर का विषय इस बात से भी तय होगा कि आप किस तरह की पत्र–पत्रिका के लिए फीचर तैयार कर रहे हैं। उदाहरण के लिए, अगर आप किसी महिला पत्रिका के लिए फीचर तैयार कर रहे हैं तो यह ध्यान रखना होगा कि आपकी पाठक अधिकांशतः महिलाएं हैं। इसी तरह अगर आप किसी दैनिक पत्र के लिए फीचर तैयार कर रहे हैं तो आपके फीचर का पाठक वर्ग विस्तृत होगा और उसमें तरह–तरह की रुचि वाले पाठक होंगे। अगर कोई पत्रिका किसी खास क्षेत्र से ही संबंधित हैं जैसे फिल्म या खेलकूद तो उसमें प्रकाशित होने वाले फीचर भी इन्हीं से संबंधित होंगे। ऐसी स्थिति में आपको कुछ बातों का ध्यान रखना होगा जैसे, दैनिक समाचार–पत्र के पाठक किसी एक क्षेत्र से संबंधित नहीं होते इसलिए वहां कोई भी प्रासंगिक और रोचक विषय फीचर के लिए चुना जा सकता है। परंतु वहां विषय का बहुत गहराई या सूक्ष्मता से प्रस्तुतीकरण संभव नहीं है। इसी तरह विशिष्टता के किसी ऐसे क्षेत्र में भी दैनिक समाचार पत्र का पाठक रुचि नहीं लेगा जो उनके लिए न रुचिकर हो न प्रासंगिक। लेकिन ऐसे विषय पत्रिकाओं के लिए प्रासंगिक हो सकते हैं।

12.5 सामग्री का संकलन

महिलाओं से संबंधित विषयों के लेखन के लिए आवश्यक सामग्री का संकलन लेखन शुरू करने से पहले ही कर लेना चाहिए। सामग्री के संकलन के आधार पर बहुत कुछ स्पष्ट हो जाएगा कि जिस विषय पर लेखन किया जाना है उसे आप क्या स्वरूप प्रदान कर सकते हैं। सामग्री संकलन में संबंधित विषय का अध्ययन और अनुसंधान, तथ्यों का संग्रह, संबंधित व्यक्तियों से साक्षात्कार और संबंधित छाया चित्र आदि आते हैं। जब विषय से संबंधित पर्याप्त सामग्री एकत्र हो जाए तो आप उसका अध्ययन कीजिए। जो आवश्यक हो उन्हें अलग कीजिए, रूपरेखा तैयार कीजिए और फिर लेखन शुरू कीजिए। यहां हम सामग्री संकलन के विभिन्न पक्षों का परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं।

12.5.1 विषय पर शोध

आपने लेखन के लिए जिस विषय का चयन किया है उस से संबंधित साहित्य का अध्ययन करके आपको मूलभूत जानकारी हासिल करनी चाहिए। उस विषय के

अध्ययन से आपको समस्या और उसके विभिन्न पक्षों की जानकारी मिल सकेगी। उदाहरण के लिए, आप अगर बाल विवाह से संबंधित फीचर लेखन तैयार करना चाहते हैं तो यह जरूरी है कि आपको इस विषय पर अब तक हुए अध्ययनों की पर्याप्त जानकारी हो। बाल विवाह के कई पहलू हैं। कानूनी पहलू के अंतर्गत आपको यह जानकारी होनी चाहिए कि बाल विवाह के लिए लड़के–लड़कियों की न्यूनतम आयु क्या है, इनका उल्लंघन होने पर किस तरह का दंड दिया जा सकता है? क्या इन कानूनों का पालन होता है? क्या उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई होती हैं? अगर नहीं तो इसके क्या कारण हैं? ये और ऐसे कई प्रश्न सिर्फ बाल विवाह के कानूनी पहलू से जुड़े हैं। बाल विवाह का लड़कियों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाला असर, इसके सामाजिक–सांस्कृतिक पक्ष आदि पर भी विस्तार से जानने की आवश्यकता होती है। जाहिर है, फीचर के लिए आप किसी विषय के किसी एक पहलू को लेना चाहेंगे। यही उचित भी है। अब आप उस पक्ष से जुड़े संभावित प्रश्नों को नोट कर लीजिए उसी के अनुसार सामग्री एकत्र कीजिए। सामग्री के दौरान आप संभावित प्रश्नों की संख्या बढ़ा–घटा सकते हैं। अगर आप किसी क्षेत्र विशेष जैसे राजस्थान में बाल विवाह प्रथा पर फीचर लिखना चाहते हैं तो यह जरूरी है कि आप इनसे संबंधित अध्ययनों को तो पढ़ें ही, आपको स्वयं उन क्षेत्रों में जाकर 'आन द स्पॉट' जानकारी हासिल करनी चाहिए। अगर आप उन क्षेत्रों में जाएंगे तो आपको मालूम होगा कि जिन परिवारों में अब भी बाल विवाह प्रचलित है वे किन स्थितियों में रहते हैं, उनकी आर्थिक स्थिति क्या है, क्या वे परिवार अपने बच्चों को स्कूल भेज पाते हैं, विशेष रूप से लड़कियों को? क्या उन गांवों में शिक्षा की समुचित व्यवस्था है? उन परिवारों की सामाजिक स्थिति कैसी है? ये और इस तरह के प्रश्नों से टकराते हुए आप कई नई वास्तविकताओं से परिचित होंगे और आप एक प्रभावशाली फीचर के लिए महत्वपूर्ण सामग्री जुटा सकेंगे।

12.5.2 तथ्यों का संकलन

महिला लेखन से संबंधित फीचर के लिए आवश्यक तथ्यों का संकलन भी जरूरी है। इस बात को एक उदाहरण से समझें मान लीजिए, आपको दहेज हत्या से संबंधित मामले पर एक फीचर तैयार करना है। आपको इस घटना की पहली सूचना समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार से प्राप्त हुई है। फीचर लिखने के लिए इतनी जानकारी पर्याप्त नहीं है। जरूरी है कि आप स्वयं तथ्यों की 'फर्स्टहैंड' जानकारी हासिल करें। इसके लिए यह भी जरूरी है कि आप पहले वे क्षेत्र निर्धारित करें जिनसे संबंधित जानकारी आपके फीचर के लिए आवश्यक है। ये क्षेत्र निम्नलिखित हो सकते हैं–

1) दहेज हत्या, आत्महत्या या दुर्घटना? क्या इस पर विवाद है?

2) दहेज–हत्या का तात्कालिक कारण

3) इनसे संबंधित विभिन्न पक्ष क्या कहते है

   क) वधू पक्ष

   ख) लड़के के घर वाले

   ग) अन्य रिश्तेदार

   घ) पड़ोसी और परिचित

4) संबंधित महत्वपूर्ण कागजात

5) पुलिस का पक्ष

6) अन्य कोई सूचना

इस तरह की सूची किसी अन्य विषय के संबंध में भी बना सकते हैं। अब आप इसके आधार पर यह तय कीजिए कि आपको किन–किन लोगों से मिलना होगा और उनसे आपको क्या–क्या जानकारी मिल सकती है। संबंधित कागजात देखने या पाने की कोशिश कीजिए, जैसे संबंधित चिट्ठी–पत्री, डायरी या कोई अन्य जरूरी कागजात।

तथ्यों का संकलन करने की इस प्रक्रिया में यह अवश्य ध्यान रखें कि दहेज–हत्या जैसे मामलों में लोग आसानी से सच्चाई नहीं बताते या जानबूझकर आपको गुमराह करने की कोशिश कर सकते हैं। इसलिए सावधानी से बातचीत करें, स्वयं भावनाओं में न बहें और यह ध्यान रखें कि आप एक बहुत दायित्वपूर्ण काम कर रहे हैं।

12.5.3 साक्षात्कार

सामग्री का संकलन करने के लिए आपको लोगों से मिलना होगा। जैसे दहेज–हत्या वाले मामले में ही आपको बहू के रिश्तेदारों, परिचितों, पड़ोसियों आदि से मिलकर तथ्यों की जानकारी प्राप्त करनी होगी। आपको संबंधित पुलिस अधिकारियों से भी मिलना चाहिए। अगर कुछ महिला संगठन या अन्य सामाजिक संगठन इस मामले से जुड़ गये हैं तो उनके कार्यकर्ताओं से भी मिलकर तथ्यों की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। इसके लिए आपको विभिन्न लोगों से साक्षात्कार लेना होगा। उपयोगी साक्षात्कार के लिए जरूरी है कि आप जिससे साक्षात्कार लेने जा रहे हैं उनसे क्या प्रश्न पूछेगे। फीचर लिखने में इस तरह के साक्षात्कारों का आप दो रूपों में प्रयोग कर सकते हैं। चाहें तो आप बातचीत में कही गई बात को फीचर में साक्षात्कार के फॉर्म में ही प्रस्तुत करें और चाहें तो बातचीत से प्राप्त जानकारी को वर्णनात्मक रूप में पेश कर दें। साक्षात्कार के दौरान कही गई बातों की सत्यता की परीक्षा अवश्य कर लेनी चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि संबद्ध लोग आपसे बातचीत के दौरान सही बात ही कहें। इसलिए बेहतर यही है कि आप एक से अधिक लोगों से मिलें और सावधानीपूर्वक जांच कर लें कि किसकी बात प्राप्त तथ्यों से मेल खाती है। यह इसलिए महत्वपूर्ण है कि अगर आपने लोगों द्वारा कही गई बातों को बिना जांचे मान लिया तो संभव है कि आप फीचर में नितांत गलत नतीजों तक पहुंच जाएं।

12.5.4 फोटो और अन्य सामग्री

फीचर के साथ आप अगर संबंधित फोटो भी देंगे तो आपका फीचर और अधिक प्रभावशाली होगा। दहेज–हत्या से संबंधित फीचर के साथ दहेज की शिकार महिला की तस्वीर दी जानी चाहिए। इसी प्रकार खेतों या कारखानों में काम करने वाली स्त्रियों से संबंधित फीचर के साथ महिलाओं को खेतों या कारखानों में काम करते हुए दिखाया जा सकता है। बाल विवाह से संबधित फीचर के साथ बाल विवाह से संबंधित फोटो चित्र दिए जा सकते हैं। कभी–कभी फीचर के साथ रेखाचित्र या कार्टून देना भी उपयोगी हो सकता है। मुख्य बात यह है कि चित्र फीचर से संबद्ध और उसके प्रभाव और उपयोगिता को बढ़ाने वाला हो।

फीचर के साथ देने के लिए छायाचित्र आदि यथासंभव पहले से एकत्र कर लेने चाहिए। जब आप सामग्री संकलित कर रहे हों तब भी और अगर आप पत्रकारिता के व्यवसाय में हैं तो वैसे भी अपनी रुचि के विभिन्न विषयों पर फोटो वगैरह एकत्र करते

रहना चाहिए ताकि जब आवश्यक हो, आप तैयार किये जाने वाले फीचर के साथ उनका उपयोग कर सकें।

फीचर के साथ अगर आप विषय से संबंधित किसी दस्तावेज की प्रतिलिपि देना चाहें तो उसकी उपयोगिता पर विचार कर लीजिए।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) राजस्थान की भील जाति की महिलाओं के संबंध में फीचर तैयार करने के लिए आप फीचर लेखक में किस योग्यता की अपेक्षा करेंगे? तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) क्या उपर्युक्त विषय पर फीचर लिखना उपयुक्त होगा? यदि हां, तो क्यों? तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) इस फीचर में किस तरह के पाठक रुचि लेंगे और क्यों? लगभग पांच पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4) अगर आपको उपर्युक्त विषय पर फीचर लिखना है, तो लेखन से पूर्व आप क्या–क्या तैयारी करेंगे? लगभग पांच पंक्तियों में बताइए।

.....

.....

.....

.....

12.6 सामग्री का संयोजन और संपादन

फीचर लिखने के लिए आवश्यक अध्ययन और सामग्री का संकलन हो जाने पर आपको प्राप्त सामग्री का संयोजन और संपादन करना होगा। यानी कि सामग्री में से उपयोगी और आवश्यक सामग्री का चयन करना होगा, उसे एक सही क्रमबद्धता देनी होगी, उनका ठीक से अध्ययन करके फीचर की रूपरेखा बनानी होगी। इतना करने पर आप एक प्रभावशाली फीचर लिख सकेंगे। इस बात को एक उदाहरण से समझें। मान लीजिए, आप बाल विवाह पर एक फीचर तैयार कर रहे हैं। इसके लिए आपने पहले तो बाल विवाह से संबंधित कुछ पुस्तकों का अध्ययन किया होगा। उनसे प्राप्त कुछ महत्वपूर्ण बातों के नोट लिए होंगे। जैसे बाल विवाह से संबंधित समाज सुधार आन्दोलनों का इतिहास और उनका योगदान, बाल विवाह निषेध से संबंधित कानून और बाल विवाह के सामाजिक–सांस्कृतिक, स्वास्थ्यपरक आदि विभिन्न पक्षों पर भी आपको कुछ उपयोगी जानकारी प्राप्त हुई होगी। निश्चय ही इन सब बातों का उपयोग आप अपने फीचर में नहीं कर पाएंगे, लेकिन यह अध्ययन आपको समस्या के विभिन्न पक्षों को समझने में मददगार होगा। हां, कुछ बातों को आप अपने फीचर में शामिल करना चाहेंगे। ऐसी बातों को अलग कर लीजिए। दूसरी चीज आपके पास 'आन द स्पॉट' ली गई जानकारी है। मान लीजिए, आपने राजस्थान के किसी गांव में जाकर बाल विवाह की स्थिति का अध्ययन किया है तो वहां से आपको कई बातें मालूम हुई होंगी। आपके फीचर का उद्देश्य भी राजस्थान के क्षेत्र विशेष में बाल विवाह की स्थिति को उजागर करना है। अब आपके सामने दो तरह की जानकारियाँ हैं–एक, वे जो आपको अपने अध्ययन से प्राप्त हुईं, दूसरी वे जो आपको अपने विषय से संबंधित क्षेत्र से प्राप्त हुई। अब आपको दोनों जानकारियों का तुलनात्मक अध्ययन करना चाहिए। इससे आपको कई नये और रोचक निष्कर्ष प्राप्त होंगे। जैसे, आपको मालूम हो सकता है कि बाल विवाह के निषेध संबधी कानून बनने के इतने वर्षों बाद भी राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में न सिर्फ निर्बाध रूप से बाल विवाह प्रचलित है, बल्कि उनको रोकने में सरकारी मशीनरी और कानून अक्षम हैं। यह भी मालूम होगा कि ऐसे क्षेत्रों में लड़कियों में शिक्षा न के बराबर है, लड़कियों के लिए पर्याप्त स्कूल भी नहीं हैं और उनको स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित करने वाला माहौल भी नहीं है। जब आप तथ्यों के साथ इन निष्कर्षों तक पहुंचेंगे तो आपका फीचर निश्चय ही प्रभावशाली बन सकेगा। लेकिन यह तभी संभव है जब आप सामग्री को एक व्यवस्थित रूप दें, उसका सावधानीपूर्वक अध्ययन करें, उसे अपने उद्देश्य के अनुसार संयोजित करें। हम यहां एक फीचर का अंश दे रहे हैं। आप देखेंगे, यहां अध्ययन से प्राप्त जानकारी ने फीचर के प्रभाव को बढ़ा दिया –

''आधुनिक भारत के इतिहास में महिला को जीने का मूलभूत अधिकार देने वाला पहला कानून 1829 में पास हुआ। तब सती प्रथा पर प्रतिबंध लगाने का कानून बना। इसके बावजूद 1987 में देवराला की रूपकंवर सती हुई। इस जघन्य कृत्य पर रोक लगाने और सती की पूजा करने के लिए प्रेरित करने पर प्रतिबंध के ताजा कानूनों के बाद भी सती प्रथा को धार्मिक अनुष्ठान बनाने वाले पुरी के शंकराचार्य के खिलाफ कोई कानूनी कार्रवाई नहीं की गई। जिस देवराला गांव में रूपकंवर सती हुई थी, उसे एक पवित्र स्थान माना जाता है।''

(फेमिना हिन्दी, अक्टूबर 1990)

उपर्युक्त अंश में आप देख सकते हैं कि 1829 के कानून और सती की पूजा आदि पर प्रतिबंध लगाने वाले नए कानूनों का हवाला देकर लेखक ने देवराला की घटना की विकरालता को और अधिक उजागर किया है। ये हवाले तभी दिये जा सके जब लेखक को उनकी जानकारी थी और इसी प्रकार देवराला से संबंधित कई घटनाओं की जानकारी ने उपर्युक्त कथन को संभव बनाया। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि फीचर लेखक सामग्री का सही ढंग से संयोजन कर उन्हें अपने उद्देश्यों के अनुसार आवश्यक रूप प्रदान करे।

12.7 फीचर का लेखन

महिलाओं से संबंधित फीचर लिखने से पहले की गई तैयारी पर ही फीचर का लेखन निर्भर करेगा। फीचर लिखना आरंभ करने से पूर्व उसकी रूपरेखा अवश्य बना लीजिए। फिर यह तय कीजिए कि आप अपने फीचर का आरंभ किस तरह से करेंगे। आपके फीचर की प्रस्तुति उसके विषय पर निर्भर करेगी और इस पर भी निर्भर करेगी कि आप किस तरह की पत्र–पत्रिका के लिए लिख रहे हैं और उसका पाठक वर्ग कौन–सा है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए आप फीचर की प्रस्तुति निर्धारित कीजिए।

12.7.1 आरंभ

फीचर का आरंभ कैसे किया जाए, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। जैसा कि हम पहले भी बता चुके हैं, फीचर का आरंभ करने की कोई बनी–बनायी विधि नहीं है। लेकिन यह अवश्य है कि आरंभ रोचक ढंग से होना चाहिए। इसके साथ ही आपके उद्देश्य की पूर्ति करने वाला भी। आमतौर पर जिस विषय पर फीचर लिखा जा रहा है, उसका आरंभ में परिचय देना आवश्यक–सा हो जाता है। लेकिन यह परिचय न तो बहुत लंबा हो न उबाऊ। 'वामा' में प्रकाशित एक फीचर लेख 'जी हां, हम अखबार बेचती हैं' में सड़कों पर अखबार बेचने वाली महिलाओं को विषय बनाया गया। इस फीचर का आरंभ महिला हॉकरों का परिचय देने से हुआ है –

''जब कभी 'हॉकर' का नाम सुनते हैं तो आंखों के समक्ष एक पुरुष आकृति उभरती है जो साइकिल पर सवार रोज सुबह आपके घर में अखबार फेंक जाता है। पर आपने कभी 'लेडीज हॉकर्स' के बारे में सोचा है। दोपहर तीन बजे के बाद आप आई.टी.ओ., कनॉट प्लेस, मेडिकल या किसी भी अन्य चौराहे पर चले जाएं–आपको कुछ महिलाएं एक हाथ में नन्हे से बच्चे को संभाले और दूसरे हाथ में तीस–चालीस अखबारों (सांध्य दैनिकों) का बंडल उठाए इधर–उधर दौड़ती मिल जाएंगी। ये ही हैं 'महिला हॉकर्स' यानी अखबार बेचने वालियां।''

उपर्युक्त आरंभिक अंश में आप पाएंगे कि लेखिका ने फीचर के विषय का परिचय दिया है परन्तु यह परिचय अत्यंत रोचक ढंग से दिया गया है। अगर परिचय को सीधे वर्णनात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता तो उसका वैसा प्रभाव नहीं पड़ता, भले ही उपर्युक्त सभी बातें उसमें समेट ली जातीं। नीचे हम उपर्युक्त अंश का ही ऐसा वर्णनात्मक रूप देखते हैं–

''आपने हॉकर के रूप में पुरुषों को ही देखा होगा, लेकिन 'लेडीज हॉकर्स' भी होती हैं। आई.टी.ओ., कनॉट प्लेस, मेडिकल आदि चौराहों पर बच्चों को गोद में लिए अखबार बेचने वाली महिलाएं 'महिला हॉकर्स' ही हैं।''

आप स्वयं तुलना करके देख सकते हैं कि पहले वाला अंश कहीं अधिक प्रभावशाली है। दूसरे वाले अंश में भी वही बातें कहीं गई हैं, परन्तु उसमें केवल तथ्यों का अभिधात्मक वर्णन है इसलिए उसमें कोई रोचकता उत्पन्न नहीं हो सकी है।

कभी–कभी फीचर की शुरुआत किसी उत्तेजक वैचारिक टिप्पणी से भी की जा सकती है। जैसे, 'फेमिना' में प्रकाशित एक फीचर **'कितनी पीछे हैं सामान्य स्त्रियाँ'** का निम्नलिखित आरंभिक अंश देखिए –

''इसका उत्तर सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी। अगर अपने आपको विश्व का एक महत्वपूर्ण और अखंड अंग मानती हैं तो हां, आज स्त्री में परिवर्तन आ रहा है। पहले की अपेक्षा अधिक तेजी से उसमें बदलाव आ रहा है। लगभग उसे एक छवि से दूसरी छवि में परिवर्तित कर दिया गया है। पर एक क्षण के लिए अगर वह अपने आसपास फैले विश्व का अवलोकन करें तो उसे आश्चर्य होगा कि उसके इर्द–गिर्द का संसार उतनी तेजी से नहीं बदल रहा है।''

निम्नलिखित फीचर की शुरुआत एक घटना के उल्लेख से की गई है –

''घर में नन्ही बहन के आने की खुशी में झूमती मगर सधी चाल से हाथों में दूध का एक गिलास कस कर थामे एक चंचल–सी बच्ची चली जा रही थी। उसे नहीं मालूम कि यह दूध नहीं बल्कि जहर है जिसे उसकी दादी या ताई उसकी नन्ही बहन को पिलाकर मार डालेगी। कल्लर जाति के लोग घर में कन्या का जन्म अभिशाप मानते हैं। इसलिए महिलाएं जन्म के तीन दिन के अंदर ही उसे एक जहरीले पौंधे का दूध पिलाकर या फिर उसके नथुनों में भूसा ठूंसकर मार डालती हैं। तमिलनाडु के मदुरै जिले के उसिलमपट्टी ब्लॉक के एक गांव में रहते हैं ये लोग।''

(बेटे से अच्छी है बेटीः संजय स्वतंत्र, रविवारी जनसत्ता, 23 दिसम्बर 1990)

उपर्युक्त फीचर समाज में बालिकाओं की स्थिति को लेकर लिखा गया है। आरंभ में नवजात लड़कियों को मारने की कुप्रथा का जिक्र करके लेखक ने पूरे फीचर को एक मार्मिक और हृदयस्पर्शी रूप दे दिया है। फीचर में बाद में जो बातें कही गई हैं उनका महत्व यह है कि इस घटना से समस्या की विकरालता का बोध पाठक को आरंभिक पंक्तियों में ही हो जाता है।

ऊपर के उदाहरणों से साफ है कि फीचर की शुरुआत ऐसी होनी चाहिए जो पाठक को आरंभ में ही बांध ले। महिलाओं के फीचर में यह तभी संभव है जब उनके प्रति सहानुभूति का भाव व्यक्त किया गया हो और उनकी समस्याओं के प्रति गहरी चिंता व्यक्त हुई हो।

12.7.2 मध्य

फीचर के मध्य भाग में विषय से संबंधित अंतर्वस्तु प्रस्तुत की जाती है। इसको कितना विस्तार देना है, कौन–सी बातें शामिल की जानी हैं और उन्हें किस क्रम से और कैसे प्रस्तुत किया जाना है, इस पर गंभीरतापूर्वक विचार कर लेना चाहिए। यहां हम उदाहरण के लिए **'जी हां, हम अखबार बेचती हैं'** फीचर के मध्य भाग को लें। इस फीचर को कुल तेरह पैरे में पेश किया गया है। जिस तरह पहले पैरे में विषय का परिचय दिया गया है, उसी तरह अंतिम पैरा 'उपसंहार' की तरह है। मध्य के पैरे में निम्नलिखित विषयों को छुआ गया है।

1) महिला हॉकर और पुरुष हॉकर के काम का भेद

2) काम में प्रवीणता

3) महिला हॉकरों का परिचय

4) रोजगार की समस्या और उनका निवारण

5) कार्य काल की विशेषता

6) अन्य कार्यों को करने की सुविधा

7) आय

8) काम से संबंधित समस्याएं ।

9) पुलिस का व्यवहार

10) एवं 11) नारीत्व की समस्या

उपर्युक्त परिच्छेदों में उठाये गये मुद्दों से महिला हॉकरों के संबंध में निम्नलिखित जानकारी प्राप्त होती है।

1) महिला हॉकरों के काम की प्रकृति

2) महिला हॉकरों की पारिवारिक–सामाजिक स्थिति

3) कार्य की प्रकृति और उससे संबंधित समस्याएं ।

4) आय और रोजगार के अन्य साधन

अगर हम विचार करें तो आसानी से समझ सकते हैं कि उपर्युक्त जानकारी महिला हॉकरों के बारे में एक सूचनात्मक और उपयोगी फीचर लिखने के लिए पर्याप्त है।

अब प्रश्न यह है कि इन समस्त सूचनाओं को किस रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसके लिए लेखिका ने इन महिला हॉकरों से स्वयं संपर्क किया, उनसे बातचीत की, उनकी समस्याओं के बारे में जानकारी हासिल की और फिर उनको आधार बनाकर फीचर तैयार किया। इसलिए फीचर में महिला हॉकरों से की गई बातचीत के उद्धरण दिए गए हैं। अब आप स्वयं फीचर का मध्य भाग पढ़कर उपर्युक्त विशेषताओं को पहचान सकते हैं।

मध्य भाग को लिखने का यही एक तरीका नहीं है, लेकिन आपकी प्रस्तुति हर हाल में तथ्यात्मक और सुरुचिपूर्ण होनी चाहिए। आप अपनी बात निबंध शैली में न कहें बल्कि अपनी बात कहते हुए बराबर घटनाओं, आंकड़ों, उदाहरणों आदि द्वारा उसको सम्पुष्ट करते रहें घटनाओं का वर्णन या संबद्ध लोगों के कथन का उद्धरण न केवल फीचर को विश्वसनीय बनाता है, बल्कि उसमें रोचकता भी पैदा करता है।

12.7.3 अंत

फीचर का अंतिम भाग आमतौर पर उपसंहार के रूप में लिखा जाता है। आपने फीचर के लिए जो विषय उठाया है, उससे निकलने वाला निष्कर्ष प्रस्तुत कर सकते हैं, कही गई बातों का सार दे सकते हैं, पाठकों को कोई संदेश दे सकते हैं या आगाह कर सकते हैं, उनका आह्वान कर सकते हैं। अलबत्ता फीचर के अंत में ऐसा कुछ अवश्य

होना चाहिए जो फीचर को सोद्देश्यपूर्ण परिणति तक ले जाए। महिला हॉकरों से संबंधित फीचर के अंतिम अंश में लेखिका ने जहां एक ओर फीचर में कही गई बातों से निकलने वाला निष्कर्ष प्रस्तुत किया है, वहीं पाठकों या समाज को उनकी स्थिति के प्रति सचेत भी किया है –

1) *''खबरें पाठक तक पहुचने का एकमात्र साधन हॉकर है, चाहे वह अखबार किसी बुक स्टाल से खरीदा हो, सड़क से या फिर आपके घर आया हो। पर विडंबना है कि बुद्धिजीवियों के इस संसार में सूचना प्राप्त करने का जो स्रोत है वह स्वयं ही अनपढ़, अशिक्षित और सूचना के प्रयोजन से परे है। महिला हॉकरों की स्थिति तो और भी विकट है। चिलचिलाती धूप, तेज वर्षा, ठिठुरती सर्दी या सार्वजनिक अवकाश उन पर कहर ढाते हैं क्योंकि उस दिन अखबार बेचना मुश्किल हो जाता है।''*

2) *''घर में आकर अखबार फेकने वाले हॉकरों की अपेक्षा इन महिला हॉकरों का काम अधिक कठिन है क्योंकि वह तो आप की इच्छा न होते हुए भी रोज आप के सिर पर अखबार थोप जाता है, पर इन महिला हॉकरों को रोज एक नई चुनौती का सामना करना पड़ता है। रोज इनके सामने एक नया प्रतिद्वंद्वी खड़ा हो जाता है। फिर सांध्य दैनिकों का महत्व एक निश्चित कालावधि तक ही होता है। अतः इस निश्चित समय में सारे अखबार बेचना कोई मामूली काम नहीं है और यह भागादौड़ी केवल एक दिन की नहीं, अपितु जीवन भर की है।''*

3) *''ऐसी कुछ महिला हॉकरों का निरीक्षण करने के बाद कुछ एक तथ्य सामने आए हैं। सबसे गौरतलब बात यह है कि इनमें से कोई भी महिला शिक्षित नहीं है। किन्तु मजाल है जो वे ग्राहक को मांगा गया अखबार देने से चूक जाएं। शकुंतला बताती हैं कि हमें सभी अखबारों की अच्छी पहचान हो गई है। इसीलिए कभी देने में कोई चूक नहीं होती है।''*

4) *''अधिकांशतः ये महिलाएं दक्षिण भारत से आई हैं। पेट की आग उन्हें अपनी जमीन से दूर यहां ले आई। केरल निवासी मरियम्मा को यहां रहते आठ साल हो गए हैं। आठ साल से वह अखबार बेचने का काम ही कर रही हैं। पर आज भी अपने गांव की याद में उसकी आंखें नम हो जाती हैं। वह कहती हैं कि अगर गांव में रोटी मिल जाती तो यहां आते ही नहीं, 'क्या अखबार बेचने से जो पैसा मिलता है वह काफी होता है?' यह पूछने पर मरियम्मा का जवाब था, 'रोटी लायक मिल ही जाता है। गांव में भूखे मरते थे।''*

5) *''भूख, अकाल, गरीबी आदि प्राकृतिक विपदाओं से विस्थापित होकर आए इन लोगों को यहां आकर रोजगार की बड़ी समस्या हुई। भाषा का ज्ञान न होने के कारण वे कोई भी व्यवसाय नहीं अपना सकती थीं। शारीरिक रूप से सशक्त न होने के कारण मेहनत मजदूरी वाला काम इनसे हो नहीं सकता था। फिर यहां के ऋतुओं की अतिवादिता भी उन्हें परेशान करती है। इन सब बातों को मद्देनजर रखते हुए उन्होंने अखबार बेचने का पेशा अपनाया और सभी लोग इसी व्यवसाय में कूद पड़े। यहां तक कि कई–कई परिवारों के सभी सदस्य अखबार ही बेचते हैं, चाहे वह दादी हो या पोता।''*

6) *''इस संबंध में मणि का मत उल्लेखनीय है। वह कहती है कि इस धंधे में समय की बचत होती है। अमूमन दोपहर तीन बजे के बाद ही सांध्य दैनिक सड़कों*

पर बिकने आते हैं और लगभग सात बजे तक उनका बिकना खत्म हो जाता है। यानी मात्र चार घंटे ही काम करना पड़ता है। सुबह से तीन बजे तक महिलाएं कुछ और भी काम कर सकती हैं और शाम सात बजे के बाद वे घर के काम के लिए फ्री हो जाती हैं।''

7) *''ज्यादातर ये महिलाएं घरों में झाड़ू–चौके का काम करती हैं, तीन बजे तक अपना सारा काम निपटा कर वे अपने गंतव्य पर पहुंच जाती हैं। वहां से अपने अखबारों का बंडल उठाकर फिर सड़कों पर निकल आती हैं। सभी हॉकरों का एरिया बंटा हुआ है और वे एक–दूसरे के क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करते हैं। शाम सात बजे तक जितने अखबार बिक जाते हैं उन्हें बेचकर बाकी बचे हुए अखबार वे घर ले जाती हैं और दूसरे दिन उन्हें डिपो पर लौटा देती हैं। इन लौटाए गए अखबारों की कीमत को दूसरे दिन के अखबारों से घटा लिया जाता है।''*

8) *''एक दिन में वे कितना कमा लेती हैं, इसके बारे में तो किसी ने स्पष्ट रूप से नहीं बताया पर सब का मत है कि इतना मिल ही जाता है कि चाय–पानी का खर्चा चल जाता है। पर इतना तो स्पष्ट है कि उन्हें इस धंधे में फायदा अवश्य होता होगा अन्यथा वे अपने बच्चों को भी अखबार बेचने के लिए मजबूर न करते। नौ वर्षीय गुड़िया पिछले एक साल से अखबार बेच रही है। उसकी मां, पिता, दादा, सब यही काम करते हैं। गुड़ियों से खेलने की उम्र में गुड़िया घर को आर्थिक फायदा पहुंचा रही है, पर वह इसका महत्व नहीं जानती। उसने तो जब से आंखें खोलीं, अपने आसपास अखबार ही अखबार फैले देखे। सोचने–समझने लगी तो मां ने अखबार का एक बंडल उसके हाथ में भी पकड़ा दिया। पहले वह अपने दादा के पास बैठकर बेचती थी, पर अब उसे अखबार की परख और धंधे के गुर आ गए हैं। इसीलिए वह इधर–उधर दौड़कर अखबार बेचती है। गुड़िया गर्व से बताती है कि वह बड़ी होकर अखबार ही बेचेगी क्योंकि वह इसे अपना पुश्तैनी धंधा समझती है।''*

9) *''ज्यों–ज्यों महिलाओं के लिए व्यवसाय के द्वार खुलते जा रहे हैं, त्यों–त्यों उनकी समस्याओं की संख्या बढ़ती जा रही है। चार घंटे अखबार बेचने के लिए इन महिला हॉकरों को चार सौ समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।''*

10) *''लगभग सभी महिलाओं ने पुलिस के व्यवहार को लेकर शिकायत की। उनका कहना था कि पुलिस उनसे बहुत बेरुखी से पेश आती है। उन्हें फुटपाथ पर खड़े होकर अखबार नहीं बेचने देती। उनमें से थोड़ी समझदारी रखने वाली महिलाओं ने माना कि अगर हम फुटपाथ पर अखबार बिछाकर बैठ जाएंगी तो आने–जाने वाले लोगों को तकलीफ होगी। पर खड़े होकर या इधर–उधर टहलकर अखबार बेचने में तो कोई नुकसान नहीं। आखिरकार हमें भी पेट भरना है। सबसे ज्यादा कोफ्त इन महिलाओं को इस बात की है कि पैसा लेकर तो पुलिस बैठने देती है। नाम न बताने की शर्त पर एक महिला ने कहा 'थोड़ा बहुत जो हम कमा लेते हैं उसमें से भी अगर इन पुलिस वालों को दे देंगे तो अपने परिवार को क्या खिलाएंगे।''*

11) *''दूसरी इनकी सामने समस्या है इनके नारीत्व का अपमान। किसी भी स्त्री के लिए वह स्थिति सबसे दयनीय होती है जब उसकी उन्नति का कारण उसकी योग्यता को न मानकर उसके स्त्री होने को माना जाए। कुछ ऐसी ही स्थिति इन महिला हॉकरों की है।''*

12) *''इसीलिए वे अधिकतर अपने अन्य साथियों के साथ ही रहती है, पर कोई आश्चर्य नहीं कि कुछ लोग ऐसे अवश्य होते होंगे क्योंकि अगर खरीदार अखबार खरीद कर उस महिला की रात की रोटी का इंतजाम कर रहा है तो वह यकीनन दानवीर कर्ण जैसा विशाल हृदय नहीं रखता होगा।''*

ध्यान देने की बात यह है कि उपर्युक्त अंश में यद्यपि कोई सुझाव या निष्कर्ष नहीं निकाला गया है परंतु हॉकरों की स्थिति पर लिखे इस फीचर से समाज के एक अत्यंत दीन–हीन समुदाय की वास्तविक स्थिति से परिचय तो होता ही है। इसी तरह के फीचर धीरे–धीरे उनके पक्ष में जन सहमति बनाने का काम करते हैं। बाद में कोई स्वैच्छिक संगठन या राजनीतिक दल इनके मामले को उठाकर इनके पक्ष में कोई कारगर कदम उठाने के लिए सरकार और प्रशासन को प्रेरित कर सकता है।

अब एक और फीचर का अंतिम भाग देखिए। इसमें पाठकों को सुझाव दिया गया है –

''बालिकाओं के सहज विकास के लिए जरूरी है कि उनकी शिक्षा, पहनावा, स्वास्थ्य और उनकी तमाम बुनियादी जरूरतों के प्रति उपेक्षा न बरती जाए। माता–पिता को यह नहीं सोचना चाहिए कि उनकी लड़कियाँ लड़कों से कम हैं। हर साल बोर्ड के नतीजे गवाह हैं कि लड़कियों ने पढ़ाई में लड़कों को काफी पीछे छोड़ दिया है। इस बालिका वर्ष में भी लड़कियों ने पढ़ाई और खेलों में कम बाजियां नहीं जीतीं। लड़कियाँ भविष्य के समाज की नींव हैं। ये आगे बढ़ेगी तो हमारा कल का समाज भी आगे बढ़ेगा।''

(बेटे से अच्छी है बेटी, संजय स्वतंत्र, रविवारी जनसत्ता, 23 दिसम्बर 1990)

ऊपर का उद्धरण फीचर को सोद्देश्यपूर्ण ढंग से समाप्त करता है।

12.7.4 शीर्षक

फीचर का रोचक और आकर्षक शीर्षक देना भी आवश्यक है क्योंकि पाठक सबसे पहले शीर्षक ही पढ़ता है। शीर्षक तय करते समय जहां फीचर की विषयवस्तु का ध्यान रखें, वहीं यह भी देख लें कि आपका शीर्षक विषय की मूल भावना के नजदीक हो। विषय की अभिधात्मक सूचना देने वाला शीर्षक प्रभावशाली नहीं होता। अगर फीचर में कोई महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया हो तो आप प्रश्नात्मक ढंग से शीर्षक बना सकते हैं। जैसे, लड़कियों के साथ बरते जाने वाले भेदभाव को लेकर आपने फीचर लिखा है। आप इस फीचर का शीर्षक सरल–सा भी दे सकते हैं– 'बालिकाओं के साथ भेदभाव' या 'लड़कियों से भेदभाव'। विषय–वस्तु की दृष्टि से आपका शीर्षक उचित है परंतु प्रभावशाली नहीं। इसे आप कुछ बदलकर प्रश्न रूप में रखें तो शीर्षक ज्यादा आकर्षक हो जाएगा। जैसे––'बच्ची से भेदभाव क्यों? यह शीर्षक ऊपर के दोनों शीर्षकों से ज्यादा असरदार है।

शीर्षक को आकर्षक बनाने का तरीका यह भी है कि शीर्षक को वाक्य या वाक्यांश (गद्य) के रूप में रखने की बजाय थोड़ा–सा काव्यात्मक या भावनात्मक स्पर्श दे दें। जैसे निम्नलिखित शीर्षक –

घट रही है लड़कियों की तादाद

(लड़कियों की तादाद घट रही है)

दिखावटी ही नहीं होतीं सेल्स गर्ल

(सेल्स गर्ल दिखावटी ही नहीं होतीं)
बेटे से अच्छी है बेटी (बेटी बेटे से अच्छी है)
कितनी पीछे हैं सामान्य स्त्रियाँ
(सामान्य स्त्रियाँ कितनी पीछे)

उपर्युक्त शीर्षकों को कोष्ठक में दिये गये वाक्यों से तुलना करने पर स्पष्ट हो जाएगा कि वाक्य में हल्का–सा हेरफेर करने से शीर्षक को आकर्षक बनाया जा सकता है। कई बार सकारात्मक और दृढ़ निश्चयी कथन भी शीर्षक के रूप में अच्छे लगते हैं। जैसे–'जी हां, हम अखबार बेचती हैं।' कहने का तात्पर्य यही है कि फीचर का शीर्षक विषय की सूचना देने वाला तो हो ही, वह रोचक और आकर्षक भी हो।

12.8 भाषा–शैली

फीचर लेखन की कोई निश्चित भाषा–शैली नहीं है। इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि फीचर निबंध या लेख की तरह शुष्क और गंभीर न हो। स्त्रियों के बारे में स्त्री की भाषा में ही लिखा जाना चाहिए। यह नारीवादी चिन्तकों की आम राय है। स्त्रियों को अलग भाषा की जरूरत क्यों है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए वर्जीनिया वुल्फ ने अपने लेख 'वूमेन ऐंड फिक्शन में लिखा है कि 'किन्तु आज भी यह सच है कि इससे पहले कि एक स्त्री वह लिख सके जो वह लिखना चाहती है, उसे कई तरह की परेशानियों का सामना करना पड़ता है। सबसे पहले तो तकनीकी और शिल्प (जो प्रकटतः बहुत सरल, वास्तव में बहुत अस्पष्ट है) के स्तर पर कठिनाई पेश आती है कि वाक्य–गठन के प्रचलित रूप उसे अनुकूल नहीं लगते। यह पुरुष निर्मित वाक्य है, जो स्त्री के उपयोग के लिहाज से बहुत शिथिल, बहुत भारी, बहुत औपचारिक है। मैरी हाइट ने लिखा है कि 'स्त्रियां भावों के रूपायन की बजाय विशेषणों के जरिए भावों के रूपायन पर ज्यादा जोर देती हैं। वे उभयपक्षीय और अंतर्विरोधी भाषा का ज्यादा प्रयोग करती हैं। वे हमेशा निश्चितता की बजाय 'संभावना' की शैली का ज्यादा प्रयोग करती हैं'। स्टेनले जूरिया ने लिखा है कि 'स्त्री पहचान के जो शब्द मिलते हैं वे प्रायः नकारात्मक अर्थ को व्यक्त करते हैं। हमारी भाषा में ऐसे शब्दों का अभाव है जो पुरुष की तुलना में स्त्री की प्रभुता को व्यंजित करें अथवा समानता के द्योतक हों'। मेरी हाइट ने 'दि वे वूमेन राइट' (1977) में लिखा कि स्त्रियों के अमूमन छोटे–छोटे वाक्य होते है, ये सरल होते हैं, इन वाक्यों में ही मूल निर्णय भी होता है। आमतौर पर फीचर का पाठक समुदाय काफी विस्तृत होता है इसलिए भाषा ऐसी होनी चाहिए जो सामान्य पाठक वर्ग के लिए भी संप्रेष्य हो। फीचर की भाषा में सहजता और सरलता के साथ–साथ रोचकता भी होनी चाहिए। यह तभी संभव है जब आप शब्दों के चयन और बनावट में साहित्यिक स्पर्श दें। जैसे फीचर का निम्नलिखित अंश देखे –

*''नौ वर्षीय गुड़िया पिछले एक साल से अखबार बेच रही है। उसकी मां, पिता, दादा सब यही काम करते हैं। **गुड़ियों से खेलने की उम्र में** गुड़िया घर को आर्थिक फायदा पहुंचा रही है, पर वह इसका महत्व नहीं जानती। उसने तो जब से **आंखें खोलीं**, अपने आस–पास **अखबार ही अखबार** फैले देखे। सोचने–समझने लगी तो मां ने **अखबार** का एक बंडल उसके हाथ में भी पकड़ा दिया। पहले वह अपने दादा के पास बैठकर बेचती थी, पर अब **अखबार की परख** और **धंधे के गुर** आ गए हैं। इसीलिए वह इधर–उधर दौड़कर अखबार बेचती है।''*

'**जी हां, हम अखबार बेचती हैं**' शीर्षक फीचर का उपर्युक्त अंश अखबार बेचने के धंधे में लगी एक छोटी–सी बच्ची का चित्र प्रस्तुत करता है। गुड़िया का उदाहरण लेकर अखबार बेचने वाले छोटे–छोटे बच्चों का मार्मिक चित्र प्रस्तुत कर दिया गया है। यह शैली ज्यादा प्रभावशाली है, बनिस्बत इसके कि लेखिका वर्णनात्मक ढंग से अखबार बेचने वाली बच्चियों के बारे में सूचनाएं दे देती। दूसरे, ऊपर के अंश में रेखांकित वाक्यांश में बात को सीधे न कहकर उसे साहित्यिक ढंग से लिखा गया है। इससे लेखिका का कथन अधिक पठनीय और रुचिकर बन पड़ा है।

फीचर की भाषा पत्रकारिता की भाषा की तरह बोधगम्य तो होनी चाहिए परंतु उसमें भावप्रवणता और तरलता भी आवश्यक है। इससे फीचर मात्र समाचार नहीं रहता। महिलाओं से संबंधित फीचर लेखन की भाषा में इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि किसी ऐसी बात, या वाक्य या शब्द का इस्तेमाल न हो जिसमें स्त्रियों के प्रति असम्मान व्यक्त होता हो ।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) कामकाजी महिलाओं की समस्याओं से संबंधित फीचर के लिए आप क्या–क्या तैयारी करना चाहेंगे? पांच पंक्तियों में बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) उपर्युक्त विषय का लेखन आरंभ करने के लिए किन–किन बातों को आप फीचर के आरंभ में समाविष्ट करना चाहेंगे? तीन पंक्तियों में उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) उपर्युक्त विषय के मुख्य सामग्री की संक्षिप्त रूपरेखा बनाइए जिसके आधार पर आप फीचर का मध्य भाग लिखेंगे।

.....

.....

.....

.....

.....

12.9 सारांश

- महिला लेखन से संबंधित यह दूसरी इकाई है। इस इकाई के आरंभ में हमने विषय के चयन के विभिन्न आधारों पर विचार किया है। अन्य विषयों पर लिखे जाने वाले फीचर की तरह ही महिलाओं से संबंधित फीचर के लिए वही विषय चुनना चाहिए जो प्रासंगिक हो, जिसमें पाठक वर्ग रुचि ले सके, जिससे महिलाओं के संबंध में समाज में जागृति उत्पन्न करने में सहायता मिले और जिस विषय में स्वयं लेखक की रुचि हो और जिसके संबंध में उसने पर्याप्त अध्ययन किया हो।

- विषय के चयन के बाद फीचर के लिए आवश्यक सामग्री का संकलन करना होता है। सबसे पहले विषय पर शोध और अध्ययन करना चाहिए, विषय से संबंधित आवश्यक तथ्य एकत्र कर लेने चाहिए। संबंधित लोगों से बातचीत करनी चाहिए और फोटो एवं दस्तावेज एकत्र कर लेने चाहिए। बिना पूर्ण तैयारी के फीचर लिखना उचित नहीं है।

- एकत्र सामग्री का पूरी तरह अध्ययन करके उनका संयोजन और संपादन – आवश्यक है। जो सामग्री आपने एकत्र की है, उसे व्यवस्थित कीजिए जो अनावश्यक लगे उसे अलग कर लीजिए और उपयोगी सामग्री के आधार पर फीचर की एक रूपरेखा बना लीजिए कि आपको किस तरह से फीचर लिखना है।

- फीचर के लेखन का आरंभ उपर्युक्त रूपरेखा के आधार पर कीजिए। आरंभ में आपको किसी न किसी रूप में विषय की जानकारी अवश्य देनी चाहिए। यह सीधे परिचयात्मक ढंग से या किसी कथन या घटना का उल्लेख करके भी दी जा सकती है। फीचर के मध्य भाग में फीचर की मुख्य अंतर्वस्तु को व्यवस्थित और रोचक ढंग से पेश कीजिए। अंतिम भाग भी प्रभावशाली होना चाहिए अर्थात वह पाठकों से किसी न किसी रूप में संवाद करता हुआ होना चाहिए। उन्हें कुछ कहे, कुछ सुझाए ताकि फीचर को एक सार्थक दिशा प्राप्त हो सके। यह अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि फीचर महिलाओं की किसी महत्वपूर्ण समस्या या पक्ष को सहानुभूतिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करे।

- फीचर को प्रभावशाली शीर्षक देने के लिए विषय के केन्द्रीय भाव को आधार बनाया जा सकता है। शीर्षक गद्यात्मक न होकर थोड़ा–सा साहित्यिक स्पर्श वाला हो सकता है जो पाठक को जल्दी आकृष्ट करे। लेकिन शीर्षक किसी भी स्थिति में महिलाओं के लिए अपमानजनक न हो।

- फीचर की भाषा–शैली का कोई बना–बनाया रूप नहीं हो सकता। विषय के अनुसार ही फीचर की भाषा और शैली तय होती है, फिर भी फीचर की भाषा सरल, सहज, रुचिकर और बोधगम्य हो । शैली वर्णनात्मक न हो, न फीचर समाचार की तरह लिखे जाने चाहिए।

अभ्यास

1) राजस्थान की भील आदिवासी जाति की महिलाओं से संबंधित फीचर लिखने के लिए कोई उपर्युक्त विषय सुझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) आपके सुझाये विषय पर फीचर तैयार करने के लिए क्या आप आदिवासी महिलाओं से साक्षात्कार लेना चाहेंगे? अगर हां, तो उनसे पूछे जाने वाले 4–5 प्रश्न तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) कामकाजी महिलाओं की समस्याओं पर एक फीचर लगभग 200 शब्दों में तैयार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

4) उपर्युक्त फीचर का एक उपयुक्त शीर्षक भी सुझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

12.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) i) इस विषय में रुचि हो।

ii) भील आदिवासी जाति और उनकी महिलाओं के संबंध में सामान्य जानकारी हो ।

iii) भील जाति और उनकी महिलाओं के संबंध में अध्ययन–शोध कर सकने की क्षमता हो।

2) हाँ, क्योंकि

i) भील जाति के संबंध में लोगों को कम जानकारी है। उनके लिए यह जानकारी से भरा विषय होगा।

ii) इससे आदिवासियों की समस्याओं के प्रति लोगों को जागरूक बनाया जा सकेगा।

3) इस फीचर में सभी वर्गों और समुदायों के पाठक रुचि ले सकते हैं। विशेष रूप से वे जो भारत की कम परिचित जातियों और समुदायों के बारे में जानना चाहते हैं। इस तरह के फीचर से लोगों को भारत की विविधता की जानकारी मिलती है औरवे समाज के वास्तविक स्वरूप से परिचित होते हैं।

4) फीचर के लिए निम्नलिखित तैयारी आवश्यक है–

i) भील जाति के संबंध में अब तक उपलब्ध सामग्री का अध्ययन।

ii) आगे की तैयारी के लिए रूपरेखा बनाना।

iii) भील जाति के लोगों के बीच जाना और उनके जीवन का नजदीकी से अध्ययन करना।

iv) इस समुदाय की महिलाओं और अन्य लोगों से विभिन्न पक्षों पर बातचीत करना।

v) उनसे संबंधित विभिन्न छायाचित्र या अन्य महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त करना, जो फीचर में इस्तेमाल की जा सकती हों ।

बोध प्रश्न 2

1) i) कामकाजी महिलाओं के संबंध में उपलब्ध सामाग्री का अध्ययन और विषयानुसार विभिन्न मुद्दों का निर्धारण।

ii) विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत कामकाजी महिलाओं से मुलाकात और बातचीत।

iii) कामकाजी महिलाओं की समस्याओं पर अन्य संबद्ध लोगों से बातचीत करना।

iv) फोटो आदि सामग्री एकत्र करना ।

2) आरंभ में कामकाजी महिलाओं से संबंधित जिस समस्या को उठाया गया है उसे प्रस्तुत करना होगा। यह कार्य सीधे–सीधे या किसी घटना या कथन द्वारा भी किया जा सकता है।

3) विषय निर्धारित कर स्वयं बनाइए।

अभ्यास के लिए दिए गए प्रश्नों के उत्तर

1) सामान्य परिचायात्मक फीचर भी तैयार किया जा सकता है और सामाजिक सांस्कृतिक, शैक्षिक आदि पक्षों पर भी फीचर हो सकता है।

2) विषयानुसार स्वयं तैयार कीजिए।

3) और 4) के उत्तर स्वयं लिखिए।

इकाई 13 बच्चों के संबंध में लेखन

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 बच्चों के लिए और बच्चों के संबंध में लेखन का अंतर

13.3 बच्चों के प्रति दृष्टिकोण

13.4 बच्चों के प्रति बदले दृष्टिकोण की जरूरत

13.5 बच्चों के सबंध में लेखन के विभिन्न क्षेत्र

- 13.5.1 पोषण और स्वास्थ्य
- 13.5.2 मनोरंजन और खेल
- 13.5.3 घर के भीतर बच्चे
- 13.5.4 बच्चे हमारे आसपास

13.6 विषय का चयन

- 13.6.1 रुचि और विशेषज्ञता
- 13.6.2 प्रकाशन की प्रकृति
- 13.6.3 विषय की प्रासंगिकता

13.7 सामग्री का संकलन

- 13.7.1 विषय पर शोध
- 13.7.2 तथ्यों का संकलन
- 13.7.3 साक्षात्कार
- 13.7.4 फोटो

13.8 सामग्री का संयोजन और संपादन

13.9 फीचर के लेखन

- 13.9.1 आरंभ
- 13.9.2 मध्य
- 13.9.3 समाप्ति और शीर्षक
- 13.9.4 भाषा शैली

13.10 सारांश

13.11 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

यह इस खंड की दूसरी और पाठ्यक्रम की तेरहवीं इकाई है। इसमें बच्चों से संबंधित फीचर लेखन पर विचार किया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- बच्चों के लिए लेखन और बच्चों के संबंध में लेखन के अंतर को स्पष्ट कर सकेंगी/सकेंगे;
- बच्चों से संबधित फीचर लेखन के महत्व को उजागर कर सकेंगी/सकेंगे;

- बच्चों के प्रति सही दृष्टिकोण की व्याख्या कर सकेंगी/सकेंगे;
- बदलते दौर को ध्यान में रखते हुए बच्चों के प्रति सही और यथार्थवादी नजरिया विकसित कर सकेंगी/सकेंगे,
- बच्चों से संबंधित फीचर लेखन के विभिन्न क्षेत्रों को पहचान सकेंगी/सकेंगे;
- फीचर के लिए उपर्युक्त विषय का चयन कर सकेंगी/सकेंगे,
- फीचर लेखन के लिए आवश्यक सामग्री का संकलन कर सकेंगी/सकेंगे और
- फीचर लेखन कर सकेंगी/सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

फीचर लेखन से संबंधित इस इकाई में हम बच्चों से संबंधित फीचर के बारे में विचार करेंगे। आपने विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में बच्चों के बारे में लिखे फीचर देखे होंगे। उनकी परवरिश और उससे जुड़ी अनेक समस्याओं पर फीचर लिखा जा सकता है। आपने यह गौर किया होगा कि बच्चों के बारे में फीचर लेखन का क्षेत्र बहुत व्यापक है। शहर में रहने वाले बच्चों की अलग समस्याएं हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों की अलग उनकी शिक्षा, पढ़ाई का बढ़ता दबाव और मौजूदा शिक्षा पद्धति को इसमें शामिल किया जा सकता है। इसी तरह बाल श्रम, बच्चों में निरक्षरता, उनमें बढ़ रहे अपराध पर भी फीचर देखने को मिलते हैं। इस इकाई में हम इस बात का खास ध्यान रखेंगे कि परिवेश को देखते हुए बच्चों की किन समस्याओं को फीचर का विषय बनाया जा सकता है। हम यह भी जानकारी देंगे कि एक अच्छा फीचर लिखने के लिए किस तरह की तैयारी की आवश्यकता है।

13.2 बच्चों के लिए और बच्चों के संबंध में लेखन का अंतर

बच्चों के लिए लेखन और बच्चों के संबंध में लेखन का अंतर समझना जरूरी है। बच्चों के लिए लेखन से आशय यह है जो उनकी आयु, अभिरुचि और उनको दिए जा सकने वाले मार्गदर्शन को ध्यान में रखकर लिखा जाए। इसमें बच्चों के लिए कहानियों, लघु उपन्यासों, चित्रकथाओं, कॉमिक्सों, पहेलियों आदि के अलावा सूचनापरक, बहुत दिलचस्प और जिज्ञासा जगाने वाले फीचर शामिल हैं। इसे हम बाल साहित्य की श्रेणी में भी रख सकते हैं। फीचर की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत गंभीर और विचार–प्रधान होती है, लिहाजा इसमें हम उस श्रेणी के आलेख शामिल कर सकते हैं जो बच्चों की परवरिश, उनकी समस्याओं, समाज में उनकी बदलती भूमिकाओं और स्थितियों का विश्लेषण करते हों। उदाहरण के तौर पर, हम रविवारी जनसत्ता में प्रकाशित इस फीचर का शुरुआती अंश देख सकते हैं, जो बच्चों के लिए उतना नहीं है जिनता बच्चों के संबंध में है–

- *''पापा, मैं आप लोगों के लायक नहीं हूँ और न ही आपकी अपेक्षाओं पर खरा उतर सकता हूँ। आप किसी और को अपना बेटा बना लीजिए जो आपकी इच्छाओं को पूरा कर सके।*

- *परीक्षा की तैयारी न होने के कारण फेल होने का डर बार–बार सता रहा है। मम्मी–पापा ने मुझसे ढेर सारी उम्मीदें पाल रखी हैं जिसे मैं पूरा नहीं कर पाऊंगा।*

- *कोलकाता के एक लड़के ने परीक्षा देने की बजाय अपने अपहरण का नाटक रचा जिससे घरवाले उससे नाराज न हों। वजह थी परीक्षा का भय और अधूरी तैयारी।*

ये कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो स्कूली छात्रों ने आत्महत्या से पहले अपने सुसाइड नोट में लिखे थे या फिर परीक्षा में असफल होने की आशंका से मां–बाप की नाराजगी का डर उनमें इतना गहरा गया था कि उन्होंने मनगढंत कहानियों का सहारा लेना उचित समझा। ऐसे मामलों से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि अपने देश में परीक्षा विद्यार्थियों के लिए किसी हव्वे से कम नहीं है। बहुत से विद्यार्थी इसे जीवन–मरण का सवाल मान लेते हैं और नाकाम रहने पर जान तक देने को तैयार हो जाते हैं। हाल ही में राजधानी और देश के कई शहरों में ऐसी घटनाएं हुईं। दिल्ली में तो एक महिला ने अपनी बेटी का परचा बिगड़ने पर जान दे दी। जाहिर है, प्रतिस्पर्धी दौर में परीक्षाओं का खौफ विद्यार्थियों के साथ उनके अभिभावकों पर भी होता है। परीक्षा नजदीक आते ही अक्सर छात्रों में तनाव बढ़ने लगता है और नतीजे आने तक यह सिलसिला जारी रहता है। इस तनाव के नतीजे इतने अप्रिय हो गए हैं कि हाल में बुद्धिजीवियों और शिक्षाविदों को परीक्षा–प्रणाली पर नए सिरे से सोचने को मजबूर होना पड़ा है।''

जिन्दगी को डराती तालीम (अभिषेक राजा, जनसत्ता, 3 अप्रैल 2005)

इस उदाहरण से कई बातें स्वतः ही स्पष्ट हो जाती हैं। इस फीचर का विषय बच्चे अवश्य हैं, मगर फीचर लेखक का लक्ष्य उनके माता–पिता, शिक्षक और शिक्षाविद् हैं। इस फीचर में मौजूदा समय की एक भयावह समस्या की तरफ इशारा किया गया है, जिसकी तरफ आमतौर पर उदासीनता बढ़ती जाती है। शुरू में प्रस्तुत उदाहरण ही अभिभावकों को सोचने के लिए पर्याप्त रूप से उद्वेलित करते हैं। यानी इसका मकसद समस्या की गंभीरता को सामने रखते हुए उसके प्रति लोगों को जागरूक बनाना है। इस इकाई में हम बच्चों से संबंधित फीचर लेखन की इसी प्रकृति पर विचार–विमर्श करेंगे।

13.3 बच्चों के प्रति दृष्टिकोण

बच्चों के बारे में लिखने वाले का नजरिया बहुत स्पष्ट और विश्लेषणात्मक होना चाहिए। बच्चों के प्रति नए और सही दृष्टिकोण की जरूरत लंबे समय से महसूस की जाती रही है। सही दृष्टिकोण का आशय अपने समय और समाज में बच्चों की स्थिति और उनकी समस्याओं को पहचानना है। इसके लिए विभिन्न आयु वर्ग के बच्चों की गतिविधियों का अध्ययन तो जरूरी है ही, साथ में बच्चों की स्थिति के बारे में एक वैश्विक नजरिये की समझ भी आवश्यक है। इसके अभाव में हम अपने बच्चों के यथार्थ का सतही विश्लेषण भर करके रह जाएंगे। इसके लिए बच्चों से संबंधित आंकड़े, विश्लेषण और रिपोर्ट आदि का निरंतर अध्ययन जरूरी है।

''हालांकि दुनिया के अधिकांश देशों में बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य है। लेकिन स्कूल जाने योग्य लगभग 12 करोड़ बच्चों में से 50 फीसद प्राथमिक शिक्षा की

परिधि से बाहर हैं। इनमें से अधिकांश दक्षिण एशियाई और अफ्रीकी देशों के हैं। शिक्षा से महरूम बच्चे ग्रामीण इलाकों और शहरों की मलिन बस्तियों में रहते हैं। शिक्षा से वंचित ये बच्चे प्रायः ऐसे जनसंख्या समूह से होते हैं जो राष्ट्रीय मुख्यधारा से अलग होते हैं।''

बेपढ़े हैं वे बच्चे (कुमार विजय, जनसत्ता, 22 अगस्त 2004)

उपर्युक्त तथ्य बताते हैं कि पूरी दुनिया के ग्रामीण इलाकों में निर्धन वर्ग के बच्चे किस तरह उपेक्षा के शिकार हैं। बच्चों से संबंधित ऐसे तथ्यों की जानकारी से न सिर्फ एक अच्छा फीचर तैयार करने में मदद मिलती है, बल्कि हमारा दृष्टिकोण और व्यापक होता है। बच्चों के बारे में एक स्पष्ट और व्यापक नजरिया विकसित करने के लिए बाल मनोविज्ञान पर विशेषज्ञों के लेख पढ़ने, बच्चों की शिक्षा प्रणाली में आने वाले बदलावों और प्रयोगों पर नजर रखने, शासन, विभिन्न स्वयंसेवी संगठनों और यूनीसेफ की रिपोर्ट के अध्ययन से मदद मिल सकती है। सही जानकारी के अभाव में फीचर लेखक का दृष्टिकोण भी अधकचरा होगा और वह अभिभावकों को कोई उचित सलाह नहीं दे सकेगा।

13.4 बच्चों के प्रति बदले दृष्टिकोण की जरूरत

यहां बताते चलें कि मौजूदा समय में बच्चों की सामाजिक स्थितियों में काफी बदलाव आया है। उच्च और उच्च मध्यवर्गीय बच्चों की जीवनशैली और रहन–सहन में जहां तेजी से परिवर्तन हुआ है, वहीं निम्न मध्यवर्ग और गरीब परिवारों के बच्चे और ज्यादा शोषण के शिकार होते जा रहे हैं। नई टेक्नोलॉजी, जैसे वीडियो गेम, सेटेलाइट टेलीविजन, इंटरनेट, वीडियो खेलों आदि ने बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में अभिभावकों की भूमिका को सीमित कर दिया है। अब बच्चों के पास ज्ञान या सूचना के स्रोत सिर्फ अपने माता–पिता और शिक्षक नहीं हैं। चौबीस घंटे चलने वाले सैकड़ों सेटेलाइट चैनलों और वेबसाइटों से वे हर तरह की सूचना ग्रहण कर रहे हैं। उनके पास चयन का विवेक नहीं है, लिहाजा वे सीखने की उम्र में ही अच्छी और बुरी हर तरह की चीजों से रू–ब–रू हो रहे हैं।

'द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास' में पवन कुमार वर्मा इन्हीं बदलावों की ओर संकेत करते हुए लिखते हैं –

''बच्चों ने इस उपभोक्तावादी उछाल के मूड को ज्यादा आसानी से ग्रहण किया। अनुसंधानकर्ताओं ने निष्कर्ष निकाला कि 'पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा बच्चे दर्शकों के दिमाग में बैठाई जा रही उत्तम रहन–सहन की छवि को ज्यादा आत्मसात करते हैं। यह भी प्रमाणित हो गया कि मध्यवर्गीय घरों के बच्चे टीवी सबसे ज्यादा और मन–बहलाव के अन्य साधन भी होने से उच्च वर्गीय बच्चे सबसे कम देखते हैं। टी.वी से चिपके रहने वाली इस पीढ़ी के 75 फीसद बच्चों ने पूछने पर बताया कि वे टी.वी विज्ञापन में दिखाए जा रहे उत्पादों को हासिल करना चाहते हैं। 'एज ऑव सुपरब्रेट' शीर्षक से आवरण कथा छापकर एक प्रमुख पत्रिका ने निष्कर्ष निकाला : 'प्रगति की सीढ़ियां चढ़ने में लगी इस दुनियां में वयस्क सत्ता, महत्वाकांक्षा और धन के पीछे भागते हैं। पैसे का बोलबाला है जिसमें बच्चे तय करते हैं कि किस पर और कैसे धन खर्च किया जाए।'इस सबसे एक ऐसी लड़ाई जन्म लेती है जिसके लिए हिरोशिमा

और कुछ नहीं टोबलरॉन, बार्बी गुड़िया और बास्किन राबिंस की आइसक्रीम जैसी चीजें हैं।''

दूसरी तरफ हम देखते हैं कि समाज में तेजी से बढ़ती प्रतिस्पर्धा के चलते बच्चों के जीवन मूल्य में बदलाव आया है। नैतिकता के मायने अब पहले जैसे नहीं रह गए। अभी कुछ साल पहले भारतीय समाज की तमाम वर्जनाएं अब स्वीकार्य होती जा रही हैं। ऐसे माहौल में अभिभावकों के लिए बच्चों की परवरिश पहले के मुकाबले बहुत मुश्किल होती जा रही है। दूसरी तरफ बढ़ती महंगाई और सामाजिक असमानता ने कमजोर तबके में बच्चों के लिए बुनियादी जरूरतों को और मुश्किल बनाया है। तमाम कोशिशों के बावजूद भारत समेत दुनिया भर में बाल श्रम और बच्चों का शोषण बढ़ा है। ऐसी स्थिति में लालन–पालन के पुराने नजरिये या तौर–तरीकों से काम नहीं चलाया जा सकता।

13.5 बच्चों के संबंध में लेखन के विभिन्न क्षेत्र

बच्चों के लिए फीचर तैयार करते समय सबसे पहले विषय के चयन का सवाल उठता है, जिस पर आगे हम विस्तार से चर्चा करेंगे। यहां हम उन क्षेत्रों पर विचार करेंगे जो उनके बारे में फीचर लेखन की पृष्ठभूमि तैयार करते हैं। साथ ही हम यह भी समझने का प्रयास करेंगे कि हमारी चिंता में शामिल बच्चों से जुड़े तमाम परंपरागत मुद्दे, बदली हुई सामाजिक परिस्थितियों में किस तरह सामने आ रहे हैं और कैसे हम उन्हें अपने लेखन का विषय बना सकते हैं।

13.5.1 पोषण और स्वास्थ्य

भारत जैसे तमाम विकासशील देशों में बच्चों का पोषण और स्वास्थ्य अब भी एक बड़ी समस्या है। यहां बच्चे सबसे ज्यादा संक्रामक बीमारियों का शिकार होते हैं। देश के कई ग्रामीण और शहरी इलाकों में बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। कई सालों से विश्व स्वास्थ्य संगठन की मदद से चल रहे पल्स पोलियो अभियान के चलते भारत में कुपोषण और खराब स्वास्थ्य की जिम्मेदार कई सामाजिक विसंगतियां भी सामने आई हैं। साफ–सफाई और स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव, लोगों में सजगता की कमी और अंधविश्वास इसकी बड़ी वजह है। नतीजे में कई संगठन सामने आए और बच्चों के स्वास्थ्य के प्रति चल रहे जागरूकता अभियान को बल मिला। इन तमाम बिंदुओं पर फीचर तैयार किए जा सकते हैं।

13.5.2 मनोरंजन और खेल

बच्चों के लिए उपलब्ध मनोरंजन के साधनों और खेल की उनके मनोविज्ञान और सामाजिक विकास में अहम भूमिका होती है। अब पहियों वाली गाड़ी और गेंद खिलौनों के प्रतीक भर रह गए हैं। बाजार हजारों रंग–बिरंगे खिलौनों और उतनी ही अवधारणाओं से भरा पड़ा है। खेल के बहाने बच्चों में हिंसा की स्वीकार्यता लंबे अरसे से समाजशास्त्रियों की चिंता का विषय रही है। कमोबेश यही स्थिति सैटेलाइट चैनलों पर दिखाए जाने वाले हिंसा और सेक्स के दृश्यों, कार्टून फिल्मों और कॉमिक्स के प्रभाव को लेकर है। होमवर्क के बोझ से दबे बच्चों का बाकी बचा वक्त टी.वी और वीडियो गेम ने ले लिया है। इसकी वजह से उनमें आपसी मेलजोल और सामुदायिकता की भावना कमजोर हुई है। इन तमाम प्रभावों को भी फीचर का विषय बनाया जा सकता है। उदाहरण देखें –

''आज तो एक से एक हैरतअंगेज खिलौनों ने बाजार पर कब्जा कर लिया है। ही–मैन और उनकी श्रृंखला के खिलौनों का पूरा सेट बहुत लोकप्रिय है। जिसके हाथ–पैर चाहें तो हिला–डुला सकते हैं। इसकी कीमत 1600 रुपये है। अमेरिका की मेटल कंपनी की लोकप्रिय गुड़िया 'बार्बी डॉल' को भारत में बेचने का काम 'लियो" खिलौना निर्माताओं द्वारा किया गया है।''

(रविवारी जनसत्ता, 13 नवंबर 1988)

13.5.3 घर के भीतर बच्चे

बदली सामाजिक स्थितियों से परिवार भी बदले हैं। घर के भीतर के पालन–पोषण पर इसका व्यापक असर पड़ा है। महिलाओं की भूमिका अब घर तक सीमित नहीं रही, वे बाहर निकलकर काम कर रही हैं। तेज रफ्तार जिन्दगी के अपने दबावों के कारण माता–पिता के पास भी अब बच्चों के लिए पहले जैसा समय परवरिश के लिए स्कूल, ट्यूशन आदि पर ही निर्भर रह गए हैं। बहुत से माता–पिता चाहकर भी अपने बच्चों को समय नहीं दे पाते तो बहुत से परिवारों में बच्चे उपेक्षित हो जाते हैं (देखें : 'नेहा–नितिन की कहानी') इस माहौल में कई बार बच्चे न सिर्फ खुद को अकेला महसूस करते हैं, बल्कि वे जिद्दी, आक्रामक और असामाजिक हो जाते हैं। ज्यादातर बच्चों की परवरिश पहले की तरह संयुक्त परिवारों की बजाय एकल परिवारों में होने लगी है, लिहाजा वे संवेदनात्मक रूप से कमजोर, भावनात्मक तौर पर असुरक्षित और जिम्मेदारियों से विहीन व्यक्ति के रूप में बड़े होते हैं। तस्वीर का दूसरा पहलू भी है। आर्थिक समृद्धि के चलते बहुत से परिवारों में बच्चों पर खास ध्यान दिया जा रहा है। ऐसे माता–पिता अपने बच्चों को बेहतर कैरियर देने के साथ जिम्मेदार नागरिक भी बना रहे हैं।

13.5.4 बच्चे हमारे आसपास

अगर फीचर लेखक अपने आसपास नजर डालें तो बच्चों से जुड़े तमाम मुद्दे सामने आ सकते हैं। खास तौर पर ग्रामीण और शहरी निम्न मध्यवर्ग के बच्चों के लिए खेलकूद के अवसर, शिक्षा की सुविधाएं, लड़कियों की स्थिति, उनकी शिक्षा से जुड़ी समस्याएं, शहरी इलाकों में बाल श्रमिक, खतरनाक उद्योगों में लगे बाल मजदूर और ऐसे तमाम बच्चे जिनकी पढ़ाई बीच में छूट जाती है–फीचर का विषय बन सकते हैं। बाल श्रम व्यापक विमर्श का विषय है। इसके बारे में लगातार लिखा जाता है। कई स्वयंसेवी संगठन तथा आन्दोलन इसके उन्मूलन का अभियान चलाते रहते हैं। इस संबंध में समय–समय पर कानून में संशोधन और शासन से जारी होने वाले दिशा–निर्देशों की जानकारी रखनी जरूरी है।

13.6 विषय का चयन

उपर्युक्त चर्चा से आपको यह अंदाजा लग गया होगा कि बच्चों के लिए लेखन का क्षेत्र काफी विस्तृत है। फीचर लेखक अपने अध्ययन, विश्लेषण और आसपास के माहौल के सतर्क निरीक्षण से इन्हीं क्षेत्रों में कई नए आयाम तलाश सकता है। बच्चों से संबंधित फीचर के लिए विषय चुनने के दौरान हमें कुछ बुनियादी बातों का भी खयाल रखना चाहिए। आगे हम उन पर विचार करेंगे।

13.6.1 रुचि और विशेषज्ञता

कोई भी फीचर तैयार करते वक्त रुचि और विशेषज्ञता जैसे दो भिन्न तत्व परस्पर सहयोगी होते हैं। ये दोनों लेखन के इतने बुनियादी पहलू हैं कि इनके बिना अच्छा फीचर तैयार नहीं किया जा सकता। जिस तरह लेखन के दौरान कुछ चुनिंदा विषय ही हमारी अभिरुचि में शामिल हो पाते हैं, वैसे ही किसी खास विषय से जुड़े सभी बिंदु हमारी दिलचस्पी का केन्द्र नहीं बन सकते। फीचर लेखक को यह देखना होगा कि उसकी दिलचस्पी बच्चों से जुड़े किन मुद्दों में खासतौर पर है। एक बार अपनी रुचि पहचानने के बाद लेखक उनमें विशेषज्ञता हासिल कर सकता है। इसके लिए पर्याप्त अध्ययन, मनन और चिंतन आवश्यक है। इनके बिना किसी फीचर के साथ न्याय कर सकना असंभव है।

उदाहरण के लिए, अगर आप बच्चों पर परीक्षा के बढ़ते दबाव और तनाव पर कोई फीचर लिखना चाहते हैं तो आपको कई पहलुओं पर सोचना होगा। सबसे पहले देखना होगा कि कौन–सी ऐसी वजहें रहीं जिन्होंने इस मुद्दे की तरफ आपका ध्यान खींचा। इससे आगे की राह आसान हो जाएगी। परीक्षा के संदर्भ में बाल मनोविज्ञान क्या कहता है? आपने अभी तक इस समस्या को किस नजरिए से देखा है और अन्य शिक्षाविद या इस क्षेत्र से जुड़े लोग इसे किस तरह देख रहे हैं? यह किस तरह हमारे जीवन को प्रभावित कर रही है? विषय पर क्या सूचनाएं उपलब्ध हैं? हमारी शिक्षा नीति इस बारे में क्या कहती है और क्या कोई वैकल्पिक शिक्षा नीति अब तक सामने आई है? इन सवालों के जवाब में ही फीचर का खाका तैयार होता चला जाएगा। यहां हम इसी विषय पर एक फीचर का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, जिससे आपको यह स्पष्ट हो जाएगा कि लेखक का अध्ययन उसके फीचर को बेहतर बनाने में किस तरह मदद करता है।

''वर्ष 2001 में 15–29 साल आयु वर्ग के करीब 38 हजार लोगों ने आत्महत्या की। इनमें 5474 छात्र थे। इन छात्रों में 2062 छात्रों ने परीक्षा में असफल होने पर आत्महत्या की थी। इसी साल देश भर में 14 साल तक के 3007 बच्चों ने आत्महत्या की। इनमें भी सबसे ज्यादा संख्या उन्हीं बच्चों की थी जो परीक्षा में असफल रहे थे।''

जिन्दगी को डराती तालीम (अभिषेक राजा, जनसत्ता, 3 अप्रैल 2005)

उपर्युक्त अंश में प्रस्तुत आंकड़े ही स्थिति की भयावहता का एहसास कराने के लिए काफी है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि लेखक ने फीचर तैयार करने से पहले इस विषय पर व्यापक अध्ययन किया है। विषय से संबंधित तथ्य और अन्य विश्लेषणात्मक सामग्री आलेख को और दमदार बनाते हैं।

13.6.2 प्रकाशन की प्रकृति

फीचर के लिए विषय का चयन करते वक्त हमें यह भी देखना होगा कि वह किस प्रकृति की पत्रिका में प्रकाशित होगा। प्रकाशन के स्वरूप के हिसाब से फीचर की विषय–वस्तु और उसकी भाषा–शैली भी तय होगी। आमतौर पर अखबारों में छपने वाले फीचर समसामयिक मुद्दों पर तात्कालिक टिप्पणी, सूचना स्रोत या विश्लेषण के रूप में सामने आते हैं। इनका व्यापक पाठक वर्ग होता है और वह हर वर्ग, समुदाय और हर तरह की रुचि वाला होता है। यानी कि फीचर ज्यादा से ज्यादा पाठकों की दिलचस्पी को ध्यान में रखकर तैयार करना चाहिए। समाचार–पत्रों के लिए लिखते

वक्त यह भी ध्यान रखना होगा कि विषय किसी तात्कालिक मुद्दे से जुड़ा हुआ हो या उसमें समसामयिक संदर्भो का जिक्र अवश्य हो। फीचर लिखते वक्त ताजा घटनाओं के उदाहरण, उन पर चल रही बहसों, टिप्पणियों का समावेश भी होना चाहिए। पत्रिकाओं का कैनवस थोड़ा विविधता भरा होता है। समसामयिक विषयों पर ही प्रस्तुत इसकी सामग्री ज्यादा विश्लेषणात्मक हो सकती है। इसमें हम आंकड़े और ग्राफिक्स का भी इस्तेमाल कर सकते हैं। वहीं जर्नल्स यानी गंभीर पत्रिकाओं के लिए लेखन की प्रकृति थोड़ी और गंभीर हो जाती है। जाने–माने शिक्षाविद् कृष्ण कुमार का यह आलेख हम बतौर उदाहरण देख सकते हैं –

''जीवनी की विधा का सबसे ज्यादा बिकने वाला रूप चित्रकथा (कॉमिक्स) का है, यद्यपि सादे रेखाचित्रों वाली किताबें भी आसानी से उपलब्ध हैं। अमर चित्रकथा माला ने बाल साहित्य की बिक्री के पिछले सारे रिकार्ड तोड़ दिए हैं। इस चित्रकथा के ग्राहकों में दुनिया भर में फैले प्रवासी भारतीयों के बच्चे भी शामिल हैं। चित्रकथा की देखा–देखी दूसरी चित्रकथाएं धड़ल्ले से छपने और बिकने लगी हैं। करोड़ों की संख्या में छप रहे रंगीन चौखटों में बच्चे स्वयं अपनी झलक कभी–कभार ही देख पाते हैं। क्योंकि कथानक का फोकस हमेशा किसी बड़े पर होता है। बच्चे जब कभी दिखाई देते हैं तो एक कोने से झांकते, किसी बड़े का प्रेरणादायक करतब देखते हुए।''

आजाद बच्चे फिर जन्म लेंगे? –कृष्ण कुमार, 1982 (स्कूल की हिन्दी)

जर्नल या किसी गंभीर पत्रिका के पाठक भी गंभीर और बौद्धिक प्रकृति के होते हैं, लिहाजा ऐसे विषय चुने जा सकते हैं, जिनमें ज्यादा गहराई से मुद्दे का विश्लेषण हो। आमतौर पर बाल श्रम, बच्चों के मनोविज्ञान, मौजूदा शिक्षा नीति जैसे विषयों के विश्लेषणात्मक पहलुओं को इसके लिए चुना जा सकता है।

13.6.3 विषय की प्रासंगिकता

विषय का चयन करते वक्त इस बात का ध्यान रखना होगा कि विषय प्रासंगिक है या नहीं और पाठक उसमें दिलचस्पी लेंगे या नहीं। यह ध्यान रखना होगा कि किसी मुद्दे की प्रासंगिकता इस बात पर तय होती है कि हम उसे किस तरह प्रस्तुत करते हैं। बहुत रोचक विषय भी अगर उबाऊ या सपाट तरीके से प्रस्तुत किया जाएगा तो पाठकों की दिलचस्पी भी उसमें नहीं पैदा होगी। वहीं सामान्य विषय को भी इस तरह किया जा सकता है कि वह पाठकों को बांधने के साथ ही विषय के प्रति उनमें दृष्टिकोण पैदा करे। यहां हम अपनी बात को और स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं –

'अंकल जी शायरी सुनाऊं।' सड़क के किनारे बैठे एक बच्चे की इस आवाज ने हमें चौंका दिया। फतेहपुर सीकरी के बुलंद दरवाजे को अपनी आंखों में कैद कर हम बाहर निकले ही थे। तेज बारिश हो रही थी। पीछे मुड़कर देखा करीब सात–आठ साल का वह मासूम–सा बच्चा फिर बोला, 'अंकल जी शायरी सुनाऊ? फिर मैंने उससे पूछा, 'शायरी सुनाने का आप क्या लेंगे?' उसने बड़ी मासूमियत से कहा, 'जो खुशी हो दे देना।' हमने उसे दो रुपये का एक सिक्का पकड़ाया। फिर क्या था, शायरी शुरू हो गई। ताज, मुमताज, चमन–बहार और जाने क्या–क्या! करीब पांच मिनट तक बिना रुके, उसे जितनी शायरी आती थी हमें सुना दी। मैंने पूछा, 'शायरी कहां से सीखी?" उसने कहा, 'गाइड सुनाते हैं, उन्हीं को सुनता रहता हूं। फिर मैंने पूछा, 'पढ़ाई–लिखाई करते हो?' उसने कहा, 'हां, दूसरी में हूं।' बरसात थम चुकी थी, हम

लोग भी निकलने को तैयार थे। चलते–चलते मैंने उसका नाम पूछा तो उसने झिझकते हुए बताया–शानू। मैंने कहा, 'फिर मिलेंगे। वह भी मुस्कुराया। बस इतनी भर थी उससे मुलाकात।

वहां से हम आगरा के लिए चल पड़े, मगर मेरे मन में उस बच्चे का चेहरा और शेर सुनाने का अंदाज उमड़–घुमड़ रहा था। उम्र के हिसाब से वह मुझे काफी खुद्दार लगा था। हाथ फैलाने की बजाय उसने स्वाभिमान से जीना सीख लिया था। यह सोच कर खुशी हो रही थी और आश्चर्य भी कि शायरी को रोजी का जरिया बनाने की सूझ उसे कैसे आई।

एक तरफ ऐसे बच्चे हैं जो एक–एक सिक्का जोड़कर अपनी जिन्दगी संवारने की कोशिश कर रहे हैं और दूसरी तरफ वे बच्चे हैं जो कभी बड़े होते ही नहीं। शानू जैसे देश में लाखों बच्चे हैं जो बचपन से पहले जवान हो जाते है। इनमें से बहुत से स्कूल भी जाते हैं, लेकिन पढ़ाई उतनी ही कर पाते हैं जितना एक बाल मजदूर के लिए जरूरी होती है। पढ़ते–पढ़ते कमाना उनकी मजबूरी है। फिर पढ़ाई छोड़ देना इनकी नियति।''

शायरी का सौदागर (मंजू सिंह, जनसत्ता 1 अगस्त 2005)

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) बच्चों से संबंधित और बच्चों के लिए लेखन में मूलभूत अंतर क्या है? इसे लगभग चार पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) बदलते भारतीय सामाजिक परिदृश्य और टेक्नोलॉजी के सामान्य जीवन में हस्तक्षेप का बच्चों की परवरिश पर क्या असर पड़ा है? उदाहरण के साथ स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

13.7 सामग्री का संकलन

फीचर तैयार करने से पहले उससे संबंधित सामग्री का संकलन फीचर लेखन से जुड़ा होना एक अहम कार्य है। किसी भी विषय पर फीचर तैयार करने से पहले हमें

आवश्यक सामग्री एकत्र करनी होती है, जिनमें आमतौर पर विषय से संबंधित आंकड़े, फोटो, लोगों के साक्षात्कार आदि को शामिल किया जाता है। आगे हम इन पर सिलसिलेवार विचार करेंगे।

13.7.1 विषय पर शोध

जब आप अपनी रुचि के मुताबिक किसी विषय का चयन करते हैं तो सबसे पहले यह आवश्यक हो जाता है कि उससे संबंधित आवश्यक सामग्री का अध्ययन कर लिया जाए। यदि आपको बच्चों के मन में बैठे इम्तिहान के खौफ पर फीचर तैयार करना है तो इससे संबंधित विभिन्न पहलुओं की जानकारी आवश्यक है। इसके लिए सरकारी दस्तावेजों, पुस्तकालयों और शोध ग्रंथों की मदद ली जा सकती है। यह पता लगाया जा सकता है कि भारत में 14 से 19 साल की आयु के कुल बालकों की कितनी संख्या है? उनमें से कितने बच्चे परीक्षा के दबावों में जीते हैं। उनकी आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक स्थिति क्या है? परीक्षा के खराब परिणाम से घबराकर आत्महत्या करने वालों की संख्या क्या है? वे किस तरह मानसिक दबाव में अपनी पढ़ाई करते हैं। विद्यालयों के प्रधानाचार्यों और शिक्षकों को इस बारे में क्या कहना है। उन्हें रोजाना कितने घंटे पढ़ना पड़ता है। इन दबावों का बच्चों के स्वास्थ्य पर क्या असर पड़ रहा है। इन सभी पक्षों के बारे में पर्याप्त अध्ययन होना चाहिए ताकि वास्तविक स्थिति का अनुमान लग सके। बिना अध्ययन किए फीचर अप्रामाणिक हो सकता है और गलत निष्कर्ष भी निकल सकते हैं। किसी क्षेत्र विशेष के बच्चों पर लिखते वक्त उस खास क्षेत्र के बारे में अलग से जानकारी हासिल करनी होगी। यह भी संभव है कि सरकारी दस्तावेजों या पिछले शोध कार्यों से ज्यादा जानकारी न मिले। ऐसी स्थिति में खुद तथ्यात्मक जानकारी हासिल करनी होगी। लेखक को पहले ही तय कर लेना चाहिए कि उसे किन–किन बातों की जानकारी आवश्यक है। उनकी सूची तैयार करके यह देखना होगा कि यह जानकारी किन स्रोतों से हासिल होगी। इसी के अनुसार कार्य आगे बढ़ेगा।

13.7.2 तथ्यों का संकलन

फीचर लेखन की प्रक्रिया का एक अहम हिस्सा तथ्यों का संकलन है। इसी की मदद से फीचर की पूरी रूपरेखा और विशिष्टता निर्धारित होती है। इसके लिए आवश्यक है कि तय किए गए विषय पर शोध और सर्वेक्षण के दौरान एकत्र तथ्यों का विश्लेषण किया जाए। इससे यह अंदाजा हो जाएगा कि कौन–सा तथ्य फीचर के लिए आवश्यक है और कौन–सा अनुपयोगी। कई बार बहुत कुछ समझाने की बजाय तथ्यों की तुलनात्मक प्रस्तुति से ही रिथति की गंभीरता का एहसास कराया जा सकता है। इसे हम इस उदाहरण से भी समझ सकते हैं –

''दिल्ली पुलिस के आंकड़ों के मुताबिक 2002 में 14 साल तक के 11 छात्रों ने और 15–19 साल के 24 छात्रों ने खुदकुशी की। जबकि 2003 में 14 साल तक के आठ और 15–19 साल के 28 छात्रों ने असफलता के कारण आत्महत्या की। आंकड़े तो पुलिस रिकार्ड में दर्ज मामलों के आधार पर हैं। इसके अलावा भी हजारों छात्र ऐसे होते हैं जिन्होंने असफलता के विकल्प के तौर पर आत्महत्या का रास्ता अख्तियार किया, लेकिन वे इसमें सफल नहीं हो पाए। साथ ही ऐसे छात्रों की संख्या भी हजारों में है जिनके मन में यह जानलेवा कदम उठाने की बात आती रहती है।''

जिन्दगी को डराती तालीम (अभिषेक राजा, जनसत्ता, 3 अप्रैल 2005)

13.7.3 साक्षात्कार

यह भी ध्यान रखें कि फीचर को जीवंत बनाने के लिए सिर्फ किताबी आंकड़ों पर निर्भर रहना उचित नहीं है। एक अच्छे फीचर को पढ़ते वक्त पाठक को यह महसूस होना चाहिए कि वह समस्या से सीधे तौर पर जुड़ा है। इसके लिए लोगों से बातचीत और साक्षात्कार आवश्यक है। साक्षात्कार लेने से पहले यह ध्यान अवश्य रखें कि आप लोगों से क्या जानना चाहते हैं। यदि यह पहले से तय नहीं होगा तो बातचीत से कुछ भी महत्वपूर्ण हासिल नहीं हो सकेगा। विषय के मुताबिक यह तय करना चाहिए कि किन–किन लोगों से मिलना है। उदाहरण के तौर पर, बच्चों पर पढ़ाई के बढ़ते दबाव के बारे में फीचर लिखते समय अभिभावकों कुछ मनोचिकित्सकों और समाजविज्ञानियों की राय ली जा सकती है। देखें –

''वरिष्ठ मनोचिकित्सक डॉ. आरसी जिलोहा के मुताबिक ज्यादा उम्मीदों की वजह से मां–बाप का बच्चों पर दबाव तो होता ही है, साथ ही सामाजिक दबाव भी होता है। वर्तमान में हमारे समाज का तानाबाना इस तरह बुन दिया गया है जिसमें सफल व्यक्ति की हर तरफ प्रशंसा होती है। वहीं असफल रहने या होड़ में पीछे रहने को लोक हिकारत भरी नजर से देखने लगते हैं। भले ही व्यक्ति ने किसी भी तरह से सफलता पाई हो या फिर असफल रहने का कारण क्या था, इसे कोई देखना–समझना नहीं चाहता।''

जिन्दगी को डराती तालीम (अभिषेक राजा, जनसत्ता, 3 अप्रैल 2005)

13.7.4 फोटो

फीचर के साथ फोटो देने से उसका प्रभाव काफी बढ़ जाता है। भारतीय पत्रकारिता के बदलते दौर में अब प्रस्तुति पर खास जोर दिया जा रहा है। संपादक भी अब विषय वस्तु को पाठकों के लिए ग्राह्य और आकर्षक बनाने के लिए तस्वीरों को बहुत महत्व देते हैं। इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि तस्वीरें वही दी जाएं जो विषय के अनुकूल हों। जैसे, बच्चों में परीक्षा के भय पर लिखे जा रहे फीचर में परीक्षा देते बच्चों का फोटो होना चाहिए। शिक्षा से जुड़े फीचर में हम स्कूली गतिविधियों की तस्वीरों का इस्तेमाल कर सकते हैं। इसी तरह से ग्रामीण क्षेत्रों पर केन्द्रित फीचर में गांव के जीवन से जुड़े फोटोग्राफ प्रयोग में लाए जा सकते हैं। वैसे हर फीचर के साथ छायाचित्र देना आवश्यक नहीं। इसकी जगह रेखाचित्र और कार्टून भी इस्तेमाल में लाए जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, हम परीक्षा के भय को दर्शाने के लिए किताबों के बोझ से दबे बच्चे का कैरीकेचर दिखा सकते हैं। देखना यह होगा कि क्या अधिक प्रभावशाली लगेगा, छायाचित्र रेखांकन या कार्टून।

13.8 सामग्री का संयोजन और संपादन

फीचर लिखना शुरू करने से पहले सारी सामग्री का संयोजन और संपादन करना आवश्यक है। सामग्री संकलन के दौरान इकट्ठा किए गए तथ्यों पर अच्छी तरह से विचार करके देखना होगा कि इनमें से कौन से तथ्य फीचर के लिए उपयुक्त हैं। अगर आपको बच्चों पर मौजूदा शिक्षा प्रणाली के दबाव पर लिखना है तो यह ध्यान रखना होगा कि पढ़ाई करने वाले बच्चों के जीवन के किन पक्षों को प्राथमिकता देनी है। फीचर लिखते समय यह भी ध्यान रखना होगा कि ढेर सारे आंकड़े, तथ्यों और साक्षात्कारों को किस क्रम में रखा जाए कि वह न सिर्फ एक पठनीय सामग्री बन सके,

बल्कि पाठकों के सामने मूल विषय को भी प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करें। यहां पहले से उपलब्ध सामग्री की काट–छांट भी जरूरी हो जाती है। इसी को हम संयोजन और संपादन का नाम देते हैं। कई बार इंटरव्यू के दौरान एक ही विषय के कई पहलुओं पर चर्चा होती है, मगर लिखते समय हम उन्हीं हिस्सों को लेते हैं, जिनकी वहां पर प्रासंगिकता होती है।

13.9 फीचर का लेखन

इस इकाई के अंतिम हिस्से में हम इस बात पर विचार करेंगे कि फीचर लिखते समय किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए। साथ ही जिस विषय या समस्या को हम फीचर के माध्यम से रखना चाहते हैं, उसकी प्रस्तुति को कैसे दिलचस्प बनाएं। यानी फीचर की भाषा किस तरह की हो और शुरुआत, मध्य और अंत कैसा हो? आइए देखें कि फीचर को एक बेहतर स्वरूप कैसे दिया जा सकता है।

13.9.1 आरंभ

किसी फीचर की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि आप उसका आरंभ कैसे करते हैं? अगर अपनी शुरुआत से ही फीचर पढ़ने वालों को आकृष्ट नहीं करेगा तो पाठक की आगे पढ़ने में दिलचस्पी खत्म हो जाएगी। बच्चों के बारे में लिखे गए फीचर पर यह बात खासतौर पर लागू होती है। ये फीचर सामान्य तौर पर बच्चों के संसार के बारे में वयस्कों से विमर्श करते हैं, लिहाजा शुरुआत में ही इस बात का खास ध्यान रखना होगा कि पाठक एक भिन्न विषय पर की जा रही चर्चा के लिए मानसिक तौर पर तैयार हो जाए। कभी–कभी शुरुआती संवाद से ही एक बड़ी समस्या से पाठकों को अवगत करा दिया जाता है। एक उदाहरण देखें –

''बेटे हॉलीडे होमवर्क कर लिया' 'वो मुझे थोड़े ही मिला है। वो तो मम्मी–पापा का काम है। 'आंटी वो काम तो मैं तभी करूंगी न जब मम्मी करवाएंगी।''

ये दोनों तरह के जवाब उन बच्चों के हैं जो पिछले हफ्ते गर्मियों की छुट्टियां मना रहे थे, लेकिन जिनके माता–पिता छुट्टी पर हो या न हो, अपने बच्चों के काम में बेहद व्यस्त रहे। दो महीने लंबी छुट्टियों में दिल्ली के किसी अच्छे, नामी और प्रतिष्ठित माने जाने वाले स्कूलों में होड़ लगी रहती है कि कौन से बच्चे दिए गए तथाकथित रचनात्मक कामों में बाजी मार सकते हैं।

''हर उम्र के बच्चों को रचनात्मक बनाने की इस मुहिम के चलते माता–पिता हठयोग की–सी साधना में लीन रहे। कुछ को हर विषय से संबंधित दस चार्ट बनाने थे। कुछ को खास शीर्षक आधारित विषयों के मॉडल। कुछ घर के फालतू सामान से कुछ उपयोगी, सजावटी सामान बनाने के लिए घर का कूड़ा खंगाल रहे थे और फालतू सामान न मिल पाने की हालत में बाजार दौड़ रहे थे, ताकि खरीदे गए महंगे सामान को फालतू या बेकार की संज्ञा देकर उपयोगी वस्तु बना सके। कुछ की जान जल–जीवों, वन्य जीवों और मनुष्यों की कठपुतलियां बनाने में अटकी थी। कलाकारी के लघु उद्योग इन दिनों घर–घर में खुले हुए थे।''

अभिभावकों की मुश्किल (प्रज्ञा, जनसत्ता, 24 जुलाई 2005)

13.9.2 मध्य

फीचर के मध्य भाग में उठाई गई समस्या का विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है। फीचर के इस भाग में हमें अपनी बात को तार्किक और क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत करना होता है। आपका बात करने का तरीका सहज और प्रभावशाली होना चाहिए। यदि आवश्यक समझें तो अपनी बात के समर्थन में आंकड़े, तथ्य, किसी विशेषज्ञ का मत और लोगों से की गई बातचीत को भी प्रस्तुत कर सकते हैं। इससे आपकी प्रस्तुति बेहतर होगी। आमतौर पर अब फीचर के अंत में सुझाव देने का परंपरागत तरीका अपनाने की बजाय कोशिश यह होनी चाहिए कि समस्या का विश्लेषण करने के साथ पाठकों को सुझाव भी मिलते जाएं। उदाहरण देखें –

''जिन्दगी का लंबा तजुर्बा होने के बाद उपेक्षित बुजुर्ग तक अपने बच्चों के बगैर कमजोर पड़ जाते हैं, तो उन मासूम बच्चों पर क्या बीतती होगी, जिनके मां–बाप ने उन्हें उनकी ही किस्मत पर छोड़ दिया है। यह कहानी भी मां–बाप के ठुकराए बदकिस्मत भाई–बहन की है, जिनके नाम नेहा और नितिन हैं। रामपुर बाग के एक अस्पताल में गंभीर हालत में भर्ती नेहा का इलाज चल रहा है।''

सुनिए! मां–बाप के ठुकराए नेहा–नितिन की कहानी

(विनीत सक्सेना, अमर उजाला, 20 जनवरी 2004)

''ऐसे हालात से बचने के लिए मनोविदों और शिक्षा शास्त्रियों की सलाह है कि पढ़ाई के प्रति बच्चे अपने दृष्टिकोण में बदलाव लाएं और परीक्षा के समय दो–तीन महीने पढ़ने के बजाय साल भर निरंतर पढ़ाई में अपना ध्यान लगाएं। लेटकर पढ़ने की बजाय कुर्सी–टेबल पर बैठकर पढ़े। साथ ही लिखकर पढ़ने से ध्यान एकाग्र रहता है। पढ़ाई को लेकर अगर बच्चे तनाव में हैं तो उन्हें इस बारे में अपने मां–बाप के साथ–साथ दोस्तों, परामर्शदाताओं और मनोचिकित्सकों से अवश्य सलाह लेनी चाहिए। इसके बावजूद अगर नजरिए में कोई कमी रह जाती है तो घबराने की बजाय धैर्य रखें और अगली बार के लिए खुद को तैयार करें।''

जिन्दगी को डराती तालीम (अभिषेक राजा, जनसत्ता, 3 अप्रैल 2005)

13.9.3 समाप्ति और शीर्षक

फीचर के अंतिम भाग में हम आमतौर पर मूल विषय के प्रति अपनी चिंताओं को दोहराते हैं और पाठकों को सजग रहने या उनके प्रति सोचते रहने का आह्वान करते हैं। इस क्रम में हम फीचर में कही गई बातों का सारांश भी प्रस्तुत कर सकते है। यहां पर एक फीचर का अंतिम अंश प्रस्तुत कर रहे हैं –

''आज सभ्य और सुसंस्कृत कहलाने वाला हमारा समाज 28 करोड़ बच्चों की मासूमियत, कोमलता और भोलेपन से स्नेह की बजाय, उनसे बचपन की मस्ती और बेफिक्री छीन रहा है। जिस समाज का बचपन उपेक्षित और शोषित है, वह समाज कदापि स्वस्थ और सुदृढ़ नहीं बन सकता। कानून भी कहता है कि अगर कोई व्यक्ति बच्चों के संग दुर्व्यवहार, उनका अपमान अथवा कोई ऐसी हरकत करता है जिससे उन्हें अति शारीरिक और मानसिक पीड़ा सहन करनी पड़े, तो वह कठोर दंड का भागी होगा। दरअसल, बच्चों के प्रति बड़ों के दुर्व्यवहार रूपी सामाजिक कोढ़ को दूर करने

के लिए माता–पिताओं और अध्यापकों को मिलजुल कर इस कानून को भावमय तौर से अपनाना जरूरी है।''

***बड़ों की दुनिया में पिटते बच्चे (रविवारी जनसत्ता, 13* नवंबर 1988)**

फीचर का शीर्षक देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि मूल विषय को ध्वनित करने के साथ वह पाठकों को फीचर पढ़ने के लिए आकर्षित कर सके। बहुत अधिक लंबा या निबंधात्मक शीर्षक फीचर के लिए उपर्युक्त नहीं माना जाता। उपर्युक्त फीचर का शीर्षक दिया गया है : 'बड़ों की दुनिया में पिटते बच्चे। इसकी जगह 'बच्चों की पिटाई : एक सामाजिक समस्या' या फिर 'बच्चों की पिटाई : समस्या और समाधान' जैसे शीर्षक किताबी लगेंगे। कुछ रोचक शीर्षक के उदाहरण आगे देखे जा सकते हैं –

'जिंदगी को डराती तालीम'
'दोस्त होके रहिए बच्चों की दुनिया में'
'अंग्रेजी की बंद गली में बच्चे'
'अब दिल नहीं बहलाते खिलौने'
'बाल विवाह का बोझ ढोती कुमारियां'
'सुनिए!मां–बाप के ठुकराए नेहा–नितिन की कहानी'

शीर्षकों को वाक्य या वाक्यांश में प्रस्तुत करें और अनावश्यक विस्तार से बचें। मुहावरे शीर्षक को आकर्षक बनाते हैं। इन दिनों बोलचाल की मिलीजुली हिंदी–अंग्रेजी यानी 'हिंगलिश' का भी शीर्षकों में खूब इस्तेमाल हो रहा है, पर इनका प्रयोग करते समय ध्यान रखें कि यह अटपटा या जबरन प्रयोग में लाया हुआ न लगे। शीर्षक में किसी तरह के उलझाव या अस्पष्टता को उसका अवगुण माना जाता है, लिहाजा इससे बचें।

13.9.4 भाषा–शैली

बच्चों के लिए फीचर लेखन जिम्मेदारी भरा काम है। हमारी भाषा ऐसी होनी चाहिए कि पाठक विषय की गंभीरता को समझ सके और उसके प्रति जागरूक हो सके। भाषा सरल, आम बोलचाल के करीब होने के साथ ही सटीक होनी चाहिए। व्यर्थ के शब्दों का प्रयोग और वाक्यों का अनावश्यक विस्तार आपके लेखन को अस्पष्ट और उबाऊ बनाता है। इससे यथासंभव बचने का प्रयास करना चाहिए। सटीक सूचना देने वाले छोटे और चुस्त वाक्य हमेशा आकर्षक लगते हैं। यहां इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि मीडिया के तेजी से विस्तार के चलते फीचर की प्रस्तुति में भी काफी फर्क आया है। यह आवश्यक नहीं है कि फीचर को जबरन किसी मुद्दे पर बेवजह के विचारों से भर दिया जाए। अब फीचर पर न्यूज, डाक्यूमेंट्री, टेलीविजन की शैलियों का भी असर पड़ रहा है। खबर और फीचर के बीच की सीमा रेखा भी मिट रही है। किसी की निजी त्रासदी को भी इस तरह से प्रस्तुत किया जा सकता है कि वह हजारों लोगों की तकलीफों को बयान करने वाला उदाहरण बन जाए। यहां हम एक ऐसी ही फीचर रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसके छपने के बाद तमाम लोग इन बच्चों की मदद को आगे आए, अखबार में प्रकाशित इसी फीचर के आधार पर टेलीविजन चैनल ने बच्चों की मां–बाप द्वारा की जा रही उपेक्षा के मुद्दे पर लंबी बहस चलाई। माता–पिता और बच्चों को रू–ब–रू किया और लोग इस मुद्दे के प्रति संवेदनशील हुए।

'सुनिए!मां–बाप के ठुकराए नेहा–नितिन की कहानी' का एक अंश–

''मम्मा–पापा आपकी बहुत याद आती है। पांच साल से आपको नहीं देखा। हॉस्टल में अब अकेले नहीं रहा जाता। सबके पैरेंट्स छुट्टियों में उन्हें घर ले जाते हैं। आप हमें मिलने क्यों नहीं आते? मम्मा मेरी तबियत खराब है। मुंह से खून आ रहा है। आप हमें ले जाओ। हम आपको डिस्टर्ब नहीं करेंगे। हमें कुछ नहीं चाहिए, मगर आपके बगैर हम कहां जाएं...

दो दिन इलाज के बाद नेहा आज बोलने की स्थिति में थी। बारहवीं की यह छात्रा अभी बच्ची–सी दिखती है। चिड़िया के सहमे बच्चों जैसे भाई–बहनों ने बताया, पापा मुकेश सिंह और मां आभा के साथ वे दोनों 1996 तक लखनऊ की इंद्रानगर कालोनी में रहते थे। उसके बाद सात साल से नैनीताल (ज्योलीकोट) के नैनसी कानवेंट के हॉस्टल में हैं। स्कूल वाले ही नेहा को इलाज के लिए यहां लाए हैं।

16 साल की नेहा बताती है कि पांचवीं में दाखिले के वक्त वह आठ–नौ साल की थी। एक साल छोटा भाई नितिन तब तीसरी में था। 1998 तक पैरेंट्स छुट्टी के पांच–सात दिन बचे रहने पर मिलने आते थे। आसपास के इलाके में बहलाने के बाद उन्हें स्कूल छोड़ जाते। एक बार देहरादून वाले घर भी ले गए। उसके बाद से मिलने नहीं आए।

उन्होंने बताया दसवीं की परीक्षा के बाद हमने मार्च 2001 में घर फोन किया, तो मम्मा ने कहा –यहां फोन न किया करो, सब डिस्टर्ब होते हैं...। यह बताते हुए नेहा की आंखें छलक पड़ीं। पापा से बात हुई तो वे बोले–माली हालत ठीक नहीं है, जब सही होगी तो स्कूल का बड़ा बिल चुकता करके तुमको ले जाऊंगा। उसके बाद उनका फोन आना बंद हो गया। हम दोनों गर्मी–सर्दी की छुटियां सूने हॉस्टल में अकेले काटते हैं।

वे बताते हैं – सारे बच्चे छुट्टी के बाद घरों से लौटकर किस्से सुनाते हैं, तो हम रात में अपने मम्मी–पापा को याद करके रोते हैं। लखनऊ में अपने मामा वी.के दीवान से बात की, तो उनका जवाब था, 'तुम्हारे मम्मी–पापा कुछ सुनने को राजी नहीं हैं। कई बार घर खत लिखे (खबर की शुरुआती पंक्तियां उन्हीं खतों से हैं) मगर कोई जवाब नहीं आया। नेहा ने बताया–अब तक तो स्कूल के प्यारे सर (मैनेजिंग डायरेक्टर आई. पी. सिंह और उनकी पत्नी मंजू सिंह) ने हमारी सारी जिम्मेदारियां उठाईं। मगर इसी मार्च में 12वीं की परीक्षा के बाद स्कूल खत्म हो जाएगा। तब क्या करूंगी? मम्मी–पापा के पास इसका कोई जवाब नहीं है।''

विनीत सक्सेना (अमर उजाला, 20 जनवरी 2004)

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) बच्चों के सम्बन्ध में फीचर लिखने में साक्षात्कार का क्या महत्व होता है?

.....

.....

.....

2) बच्चों से जुड़े फीचर का आरंभ किस प्रकार किया जाना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

3) बच्चों पर फीचर की भाषा कैसी होनी चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

13.10 सारांश

- यह इकाई बच्चों से संबंधित फीचर लेखन के बारे में हैं। हमने इसमें स्पष्ट किया है कि बच्चों के लिए लेखन और बच्चों के बारे में लिखे जाने में क्या फर्क है। बच्चों से संबंधित फीचर उसे कहते हैं जो वयस्क पाठकों को ध्यान में रखकर लिखा जाए, मगर उसका विषय बच्चे हों। इस पूरी इकाई में फीचर लेखन के इसी पहलू पर विचार किया गया है।
- बच्चों पर लिखने से पहले हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि उनके प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या है। एक फीचर लेखक को बच्चों की सामाजिक स्थितियों में आए बदलावों को ध्यान में रखते हुए अपना नजरिया विकसित करना चाहिए। यह दृष्टिकोण उदार, प्रगतिशील और मानवीय होने के साथ बदलते वक्त की समझ रखने वाला होना चाहिए। नई टेक्नोलॉजी, जैसे वीडियो गेम, सेटेलाइट टेलीविजन, इंटरनेट आदि ने बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में अभिभावकों की भूमिका को सीमित कर दिया है।
- इकाई में यह स्पष्ट किया गया है कि बच्चों के लिए फीचर लेखन का क्षेत्र कितना व्यापक है। बच्चों के पोषण और स्वास्थ्य, उनके मनोरंजन और खेल के साधन, समाज पर पड़ते प्रभाव, परिवार के भीतर बच्चों की स्थिति और अपने आसपास की दुनिया में बच्चों की स्थिति को फीचर का विषय बनाया जा सकता है।
- बच्चों के संबंध में फीचर लेखन के लिए विषय का चयन किस आधार पर किया जाना चाहिए, सामग्री का संकलन कैसे हो और उसका संयोजन कैसे किया जा इन पर इकाई में सोदाहरण विचार किया गया है। बच्चों के संबंध में फीचर का आरंभ कैसे किया जाए, उसका मुख्य कलेवर (मध्य भाग) कैसे लिखा जाए, उसको कैसे समाप्त किया जाए, इन पर भी विभिन्न उदाहरणों के जरिए प्रकाश

डाला गया है। इकाई में फीचर का प्रभावशाली शीर्षक देने पर भी विचार किया गया है।

अभ्यास

1) अपने छोटे भाई, बहन या किसी परिचित पांच से दस वर्ष के बच्चे की एक दिन की गतिविधियां नोट कीजिए और बताइए की पढ़ाई के अलावा वह किन–किन बातों में दिलचस्पी लेता है। अपना उत्तर करीब सात सौ शब्दों में लिखें।

.....

.....

.....

.....

2) आपके विचार से टेलीविजन का बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है? उन दिखाए जाने वाले वीडियो एलबम और कार्टून फिल्मों के असर विश्लेषण भी करें।

.....

.....

.....

.....

3) यदि आपको बाल श्रम के बारे में फीचर लिखना हो तो किन प्रमुख बातों का ध्यान रखेंगे? संक्षेप में बताएं।

.....

.....

.....

.....

13.11 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न –1

1) देखिए, भाग 13.2

2) देखिए, भाग 13.4

बोध प्रश्न– 2

1) देखिए, उपभाग 13.7.3

2) देखिए उपभाग 13.9.1

3) देखिए, उपभाग 13.9.4

अभ्यास के लिए दिए गए प्रश्नों के उत्तर इकाई के गहन अध्ययन के पश्चात स्वयं लिखिए।

इकाई 14 किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लेखन का अभिप्राय

14.3 इन वर्गों के लिए लेखन का महत्व

14.4 सामाजिक पृष्ठभूमि

14.5 किशोरों, युवाओं और बुजुर्गों के संबंध में लेखन के विभिन्न क्षेत्र

- 14.5.1 टेक्नोलॉजी और भारतीय किशोर
- 14.5.2 बदलते समाज में युवा
- 14.5.3 अकेले होते बुजुर्ग

14.6 विषय पर लेखन के प्रकार

- 14.6.1 संवादहीनता
- 14.6.2 विघटन
- 14.6.3 अकेलापन
- 14.6.4 अपराध
- 14.6.5 रिश्तों में तनाव
- 14.6.6 परिवर्तन

14.7 लिखने के लिए आवश्यक योग्यता

14.8 विषय का चयन

- 14.8.1 रुचि और विशेषज्ञता
- 14.8.2 लेखन का उद्देश्य और प्रासंगिकता
- 14.8.3 प्रकाशन की प्रकृति

14.9 सामग्री का संकलन

- 14.9.1 विषय पर शोध
- 14.9.2 तथ्यों का संकलन
- 14.9.3 साक्षात्कार
- 14.9.4 फोटो तथा अन्य सामग्री

14.10 सामग्री का संयोजन और संपादन

14.11 फीचर लेखन

- 14.11.1 आरंभ
- 14.11.2 मध्य
- 14.11.3 अंत और शीर्षक

14.12 भाषा–शैली

14.13 सारांश

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

14.14 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

यह इस खण्ड की तीसरी इकाई है। इसमें आप किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लिखे जाने वाले फीचर के बारे में व्यावहारिक ज्ञान हासिल कर सकेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के बारे में लिखे जाने वाले फीचर की विषयवस्तु और सामाजिक पृष्ठभूमि की समझ हासिल कर सकेंगी/सकेंगे;
- इन तीनों विशिष्ट वर्गों के लिए फीचर लेखन की जरूरतों को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- यह जान सकेंगी/सकेंगे कि किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए किन क्षेत्रों में फीचर लेखन किया जा सकता है;
- फीचर लेखन के लिए विषय के चयन तथा उसके लिए आवश्यक तैयारी के बारे में व्यावहारिक ज्ञान हासिल कर सकेंगी/सकेंगे; तथा
- फीचर के आरंभ, मध्य और अंत की तकनीकी जानकारी तथा इस तरह के फीचर में इस्तेमाल होने वाली भाषा–शैली की जानकारी हासिल करते हुए इन विषयों पर फीचर लेखन की क्षमता का विकास कर सकेंगी/सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

यह समाचार पत्रों के लिए फीचर लेखन से संबंधित व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम की 14वीं इकाई है। इस इकाई में हम आपको समाज के विशिष्ट वर्ग किशोर, युवा और बुजुर्गों के बारे में लिखे जाने वाले फीचर के बारे में जानकारी देंगे। इसमें हम आपको बताएंगे कि बदलते समय के साथ इन तीनों वर्गों की सामाजिक भूमिका में किस तरह बदलाव आया है, जिसका लेखक को ध्यान रखना चाहिए। इसकी समझ विकसित करने पर ही अच्छे फीचर की विषय वस्तु तैयार हो सकती है। इसलिए हम विस्तार से तीनों वर्गों की सामाजिक पृष्ठभूमि और भारत के आर्थिक–सामाजिक परिदृश्य में आए बदलावों के संदर्भ में इनकी पड़ताल कर सकेंगे। हम यह भी देखेंगे कि वो कौन से प्रमुख मुद्दे हैं, जिनके आधार पर फीचर तैयार करने के लिए दिशा–संकेत मिल सकते हैं। इस तरह के फीचर में प्रयोग होने वाली भाषा–शैली और उसकी बनावट पर अलग से विचार किया जाएगा। इससे आपको इन वर्गों पर लिखे जाने वाले फीचर की प्रस्तुति को बेहतर बनाने में मदद मिलेगी।

14.2 किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लेखन का अभिप्राय

उत्तर औपनिवेशिक भारतीय समाज के बीते 15–20 सालों में तेजी से बदलाव आया है। एक सामाजिक इकाई के रूप में परिवार का स्वरूप भी इन वर्षों में काफी परिवर्तित हुआ है। उदारीकरण के बाद आर्थिक परिदृश्य ने परिवार के भीतर आए इस बदलाव में बड़ी भूमिका निभाई है। पवन कुमार वर्मा अपनी किताब 'द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास' में इसी परिवर्तन की पड़ताल करते हुए लिखते हैं –

''उपग्रहीय टी.वी. के विस्फोट ने घर–घर उपभोक्तावाद का संदेश जिस दक्षता और प्रभावोत्पादकता से पहुंचाया उसकी कुछ वर्षों पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। इस क्रांति का आगाज 1991 में हुआ था। 1995 तक अनुमानतः करीब एक करोड़ 80 लाख घरों के तार केबल अथवा उपग्रहीय टी.वी से जुड़ चुके थे। बहुत से मध्यवर्गीय परिवारों ने दूरदर्शन की ***इजारेदारी फलांगते*** *हुए पाया कि अब उनके पास देखने को पचास से भी ज्यादा चैनल हैं। हर चैनल का आधार अनिवार्यतः विज्ञापन ही था''*

देखते–देखते परिवार की विभिन्न इकाइयों की भूमिका में काफी परिवर्तन आ गया। खासतौर पर किशोरों, युवाओं और बुजुर्ग वर्ग की स्थिति बदली। गौर करने लायक बात यह है कि अब तक घर का प्रौढ़ सदस्य ही परिवार और समाज की एक आर्थिक इकाई के बतौर देखा जाता था, लिहाजा उसके इर्द–गिर्द ही लेखन और उससे जुड़ी विषय वस्तु का ताना–बाना बुना जाता था। अब युवाओं, किशोरों और बुजुर्ग वर्ग की अपनी निजी स्वायत्तता सामने आने लगी है, उनकी दिक्कतों, जरूरतों और बदली भूमिका को सामने लाने में इस दौर की पत्रकारिता ने अहम भूमिका निभाई है। उन पर फोकस करके खास तरह के लेख लिखे जा रहे हैं। वहीं पूरे परिवार के लिए 'धर्मयुग' या 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' जैसी एक ही पत्रिका की अवधारणा लगभग खत्म हो गई। संदेह नहीं कि इन व्यापक परिवर्तनों ने पत्रकारिता और लेखन पर भी असर डाला है। इसका असर इन दिनों की पत्रकारिता में विषय के चयन, प्रस्तुति और शैली पर साफ देखा जा सकता है।

14.3 इन वर्गों के लिए लेखन का महत्व

किसी भी देश में किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग की स्थिति यह साफ करती है कि हमने दरअसल कैसा समाज तैयार किया है। युवाओं और किशोरों से भावी समाज तैयार होता है और बुजुर्गों से उसे स्थायित्व मिलता है। देखें तो उदारीकरण के बाद भारत में पीढ़ियों के बीच खाई और चौड़ी हुई है। जहां एक तरफ युवाओं और बुजुर्गों की समस्याएं बढ़ी हैं, वहीं समाज में उनके लिए व्यापक जगह भी बनी है। ये दोनों पहलू इस दौर में फीचर लेखन का व्यापक संदर्भ तैयार करते हैं। जहां कैरियर के प्रति चिंता, जीवन के प्रति उन्मुक्त नजरिया, उपभोक्तावादी रुझान और सेक्स के प्रति खुलापन आज के युवा और किशोर वर्ग की हकीकत बनती जा रही है, वहीं बुजुर्गों को बढ़ती असुरक्षा, अकेलेपन और उपेक्षा का सामना करना पड़ रहा है। भारतीय मध्यवर्ग में संयुक्त परिवार खत्म होते जा रहे हैं, लिहाजा, अकेला होना इस समाज के बुजुर्गों की नियति बनती जा रही है। युवाओं और बुजुर्गों के बीच संवाद अब लगभग खत्म हो चुका है। हालात कुछ इस तरह हैं जैसे कि एक ही भारतीय समाज में दो भिन्न युगों के लोग रहते हैं। इन बदली परिस्थितियों के बीच लेखन की अपार संभावनाएं हैं।

14.4 सामाजिक पृष्ठभूमि

भारतीय समाज शुरू से ही परंपरागत मूल्यों से जुड़ा रहा है। ये परंपराएं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संचारित होती जाती थीं। आधुनिक भारतीय समाज में इस तरह की श्रृंखला टूटने लगी। नतीजा यह हुआ कि पारंपरिक मूल्यों का ह्रास हुआ, मगर उनकी जगह नए मूल्य स्थापित नहीं हुए। पश्चिमी जीवन शैली का तेजी से अनुकरण हुआ

लेकिन आधुनिक जीवन मूल्यों से भारतीय समाज अनभिज्ञ रहा। इसकी वजह से युवाओं में एक किस्म का बिखराव देखने को मिलता है। इतने बड़े प्रजातांत्रिक देश में युवाओं की राजनीतिक चेतना बहुत ही अपरिपक्व है। वहीं उपभोक्तावाद का असर किशोरों और युवाओं पर पड़ा है। किशोरों में कैरियर के प्रति स्पष्ट नजरिया और अधिक पैसा कमाने की होड़ भी दिखने लगी है। परंपरागत समाज के तौर–तरीके खत्म होने के साथ स्त्री–पुरुष के बीच दूरी घटी और यौन स्वतंत्रता बढ़ी है। प्रेम की परिभाषा बदली है। आज का युवा जीवन को ज्यादा व्यावहारिक होकर जीने में यकीन रखता है। इसके सकारात्मक पहलू भी सामने आए लेकिन इसके चलते भारतीय समाज में एक बड़ा संकट भी पैदा होने लगा। मानसिक रूप से परंपरागत समाज से जुड़ा मध्यवर्गीय युवा एक दोहरी मानसिकता में जी रहा है।

दूसरी ओर, बुजुर्गों की तरफ देखने से लगता है कि वे आर्थिक रूप से स्वतंत्र और मजबूत तो हुए, मगर सामाजिक रूप से लगातार कमजोर पड़ते जा रहे हैं। जिस सामाजिक व्यवस्था में वे खुद को सुरक्षित महसूस करते थे, वह अब छिन्न–भिन्न होती जा रही है। संपत्ति के लालच में उन पर हमले बढ़े हैं तो महानगरों में बच्चों से दूर अकेले रहने वाले बुजुर्गों का जीवन असुरक्षित होता जा रहा है। कभी जीवन के अंतिम समय में एक भरे–पूरे परिवार का मुखिया बनने वाला भारतीय आज जीवन संध्या में अकेला, उदास और असुरक्षित है। ऐसे में एक बेहतर फीचर लेखक को इन संकटों की पहचान कराने वाला बनकर भी सामने आना चाहिए। इन विषयों पर लिखे जा रहे फीचर की यह अनिवार्य शर्त होनी चाहिए कि वह बदलाव के मद्देनजर उसके अच्छे–बुरे पहलुओं को लोगों के सामने उजागर कर सके। समाज में इन मुद्दों पर व्यापक बहस चलाने में और दृष्टिकोण विकसित करने में अखबार के ये मौलिक फीचर एक बड़ी भूमिका निभाते हैं।

14.5 किशोरों, युवाओं और बुजुर्गों के संबंध में लेखन के विभिन्न क्षेत्र

किसी भी लेखक के लिए इन विशिष्ट वर्गों के लिए लेखन में अपार विषय विस्तार है। यहां हम यह देखेंगे कि वो कौन से अहम पहलू हैं जिनकी तरफ निगाह डालने से बेहतर फीचर लेखन में मदद कर सकती हैं।

14.5.1 टेक्नोलॉजी और भारतीय किशोर

बदलती टेक्नोलॉजी ने किशोरों के जीवन पर व्यापक प्रभाव डाला है। सेटेलाइट चैनलों की इसमें सबसे अहम भूमिका है। विज्ञापन, टी.वी सीरियल और फिल्में उनकी जीवन शैली में उपभोक्तावाद के दखल का प्रमुख औजार रहे हैं। ग्लोबलाइजेशन के दौर में नौकरियों के बढ़ते अवसर, पश्चिमी जीवन शैली के तेजी से प्रसार, इंटरनेट के बढ़ते इस्तेमाल और शिक्षा के क्षेत्र में उदारीकरण ने भी उन पर काफी असर डाला है। इसका सीधा असर हम उनकी जीवन शैली पर देख सकते हैं। खास बात यह है कि समाज के इस वर्ग के लिए नई टेक्नोलॉजी कोई अजूबा चीज नहीं है। परंपरागत शिक्षा की बजाय सूचना प्रौद्योगिकी और प्रबंधन के पाठ्यक्रमों पर ज्यादा जोर है। आई. टी. और मैनेजमेंट के इन संस्थानों ने एक नए किस्म की संस्कृति को विकसित किया है।

तस्वीर का एक बिल्कुल उलट पहलू यह है कि उदारीकरण के बाद सामाजिक असमानता भी तेजी से बढ़ी है। जहाँ मध्यवर्ग और उच्च मध्यवर्ग के किशोरों की जीवन शैली में तेजी से बदलाव देखा जा सकता है वहीं निम्न मध्यवर्गीय जीवन जीने वाले परिवारों के किशोर शोषण और अपराधीकरण का शिकार हो रहे हैं। बढ़ती असमानता उनमें हताशा और कुंठा पैदा कर रही है। यही वजह है कि अपराध की घटनाओं में किशोरों की भागीदारी बढ़ी है। परंपरागत मूल्यों का ह्रास होने की वजह से सभी तबकों में किशोर–किशोरियों का सामाजिक शोषण भी बढ़ा है। यौन शोषण की घटनाओं में बीते सालों में तेजी से इजाफा हुआ है।

14.5.2 बदलते समाज में युवा

इसी तरह से युवाओं की प्राथमिकताओं में आए बदलाव, कैरियर के प्रति रुझान, उनकी राजनीतिक सक्रियता, पीढ़ियों के बीच बढ़ती खाई, युवाओं में आई यौन स्वतंत्रता, उससे उपजे विरोधाभास और द्वंद्व फीचर का विषय बन सकते हैं। 'इंडिया टुडे' अपने 20 अगस्त 2003 के अंक में इसी बदलाव को इंगित करते हुए लिखता है–

''मादक सौंदर्य की मल्लिका सुष्मिता सेन और नैसर्गिक सौंदर्य का एहसास कराती ऐश्वर्या राय ने जो शुरुआत की, उससे ऐसा लगा मानो भारत ने सुंदरता के अंतरर्राष्ट्रीय ताजों का पेटेंट हासिल कर लिया हो। समूचे भारत में चाहे छोटे शहर हों या महानगर, आंखों में एक सपना पाले अभिभावक सौंदर्य निखारने वाली संस्थाओं के सहयोग से अगली विश्व सुंदरी तैयार करने के काम में जिद और जुनून से जुटे हुए हैं।''

(इंडिया टुडे, 20 अगस्त 2003)

भारतीय समाज में युवा की राजनीतिक सक्रियता हाल–फिलहाल तक वैसी नहीं रह गई जैसी की साठ और सत्तर के दशक में थी। उनकी प्राथमिकताओं में कैरियर सबसे अहम है। हाल के वर्षों में स्त्री सशक्तीकरण की प्रक्रिया में तेजी आई है। इसका युवाओं की सोच और उनकी जीवन–शैली पर खासा असर पड़ा है। युवाओं के आपसी संबंधों, विवाह और प्रेम की अवधारणा में पहले से बहुत फर्क आया है। प्रेम अब भावुक न होकर ज्यादा व्यावहारिक फैसले में बदलता जा रहा है। मध्य और उच्च मध्यवर्गीय युवाओं में प्रेम के लिए खुद को मिटाने जैसी आत्मघाती प्रवृत्ति में कमी आई है और कैरियर को भावनात्मक संबंधों पर तरजीह मिल रही है। युवाओं के बीच यौन संबंधों को सामाजिक स्वीकृति तो नहीं मिली है, मगर वे वर्जनाओं से मुक्त भी होते जा रहे हैं। इन्हीं वर्षों में युवाओं के बीच वैवाहिक संबंधों में बिखराव भी देखने को मिल रहा है। तलाक की घटनाएं और विवाहेत्तर संबंध भी बढ़े हैं। कुल मिलाकर यह भारत में बहुत तेजी से चल रहे सामाजिक परिवर्तन का दौर है, जहां बेहतर लेखन के लिए खुदका नजरिया भी बहुत साफ और विश्लेषणात्मक रखना होगा।

14.5.3 अकेले होते बुजुर्ग

भारतीय बुजुर्गों के लिए यह दौर अकेलेपन का है। समाज में अनुभव से प्राप्त ज्ञान के पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचार की प्रक्रिया लगभग खत्म हो गई है, जिसका नतीजा यह हुआ कि बुजुर्ग सहसा अप्रासंगिक हो गए हैं। नई पीढ़ी समझती है कि इस दौर के लिए उनके जीवन अनुभवों का कोई मूल्य नहीं है। शहर और गांव दोनों ही जगह वे अकेले और उपेक्षित होते जा रहे हैं। इस दौर में कैरियर के चलते बेटे–बेटियों से दूर होने

की विवशता भी उनके साथ है। वे इस समाज में असुरक्षित भी हुए हैं। असामाजिक तत्वों का वे आसान शिकार हैं। आने वाले दिनों में यह संकट और बढ़ने वाला है। ऐसा नहीं है कि बुजुर्गों के लिए बदला हुआ दौर सिर्फ निराशा लेकर आया हो। उनकी समस्याएं बढ़ी हैं तो अब उन पर पहले से ज्यादा फोकस भी हो रहा है। कई स्वयंसेवी संगठन उनकी मदद को आगे आ रहे हैं। वे आर्थिक रूप से पहले से ज्यादा सबल हुए हैं। बच्चों के बेहतर कैरियर और भविष्य के प्रति सुनियोजित रणनीति बनाने की वजह से वे जीवन की अंतिम बेला में ज्यादा सुखी और संतुष्ट है। बेटियों को मिली स्वतंत्रता, शिक्षा और बेहतर कैरियर ने बुढ़ापे में सिर्फ बेटों पर निर्भरता को खत्म किया है।

14.6 विषय पर लेखन के प्रकार

इन वर्गों पर फीचर लिखने के लिए विषय के विस्तार की संभावनाओं को भी टटोलना होगा। इन्हें सीधे–सीधे किसी खांचे में नहीं बांटा जा सकता क्योंकि तेजी से आ रहे सामाजिक बदलाव के मद्देनजर इसमें हमेशा असीमित संभावनाएं बनी रहेंगी। यहां हम सुझाव के तौर पर कुछ प्रमुख मुद्दों को प्रस्तुत कर रहे हैं, जो तीनों वर्गों में सामान्य तौर पर उठते रहते हैं और जिन्हें हम फीचर का विषय बना सकते हैं।

14.6.1 संवादहीनता

यह इस दौर की सबसे बड़ी समस्या के रूप में उभरकर सामने आई है। किशोर युवा और बुजुर्ग संवादहीनता की स्थिति से गुजर रहे हैं। समाज की प्रमुख आर्थिक इकाई यानी उसके प्रौढ़ सदस्य से उनका संवाद लगभग खत्म हो चुका है। बुजुर्गों का संतानों से या तो नाता टूट गया है या उनके बीच अदृश्य दूरी खिंच गई है। यही स्थिति किशोरों और युवाओं की अपने अभिभावकों के साथ है। अब ऐसे मौके भी खत्म होते जा रहे हैं जो सामाजिक स्तर पर संवाद स्थापित करते थे। यदि हैं भी तो उनमें आडंबर ही शेष रह गया है।

14.6.2 विघटन

इस दौर में विघटन कई स्तर पर है। एक सामाजिक इकाई के बतौर किशोर, युवा और बुजुर्ग विघटन के शिकार तो हैं ही, वे वैयक्तिक विघटन का भी शिकार हो रहे हैं। यही वजह है कि इस दौर में हिंसक और आत्मघाती प्रवृतियां बढ़ी हैं। किशोरों और युवाओं के साथ बुजुर्गों में भी आत्महत्या के मामले सामने आने लगे हैं। ज्यादातर फीचर लेखक इन पर लिखते वक्त घटनाओं या आंकड़ों का ब्योरा तो देते हैं मगर इनके कारणों का विश्लेषण करने से बचते हैं। देखा जाए तो उन वजहों को उद्घाटित करना आज के दौर में फीचर लेखक के लिए सबसे बड़ी चुनौती है।

14.6.3 अकेलापन

यह भी दरअसल संवादहीनता से ही उपजी स्थिति है। अब तक शहरों में रहने वाले युवा–किशोर और बुजुर्ग अकेलेपन का शिकार थे, अब गांवों में रहने वाले भी एक दूसरे अर्थों में अकेले होते जा रहे हैं। वे तेजी से बदल रहे समाज और टैक्नोलॉजी से अपना तालमेल नहीं बैठा पाने की वजह से पीछे छूटते जा रहे हैं। दरअसल यहां हम जिन संदर्भो में अकेलेपन का जिक्र कर रहे हैं, वे निजी अकेलापन न होकर सामाजिक अकेलापन है, जो अलग–थलग कर दिए जाने से पैदा हुआ है।

14.6.4 अपराध

इस दौर में अपराध बढ़े हैं। किशोरों के खिलाफ अपराध हो रहे हैं साथ ही उनकी खुद की भागीदारी भी अपराध में बढ़ रही है। समाज के भीतर भी अपराध बढ़े हैं, बलात्कार, लूट की घटनाओं से अब अपने आसपास के समाज में रहने वालों की शिरकत का भी पता चलता है।

14.6.5 रिश्तों में तनाव

रिश्ते अब पहले जैसे सहज नहीं रह गए हैं। रिश्तों में आए तनाव की तमाम वजहें हो सकती हैं, मगर तनाव अब सतह पर दिखने लगा है। बुजुर्गों की नई पीढ़ी से असहमतियां तो पहले से थीं, और देखें तो इस मामले में आज के बुजुर्ग आत्म–समर्पण की स्थिति में पहुंच गए हैं, मगर उनके बीच आपस में ही असहमतियों के स्वर उभरने लगे हैं। वहीं युवा दंपतियों के बीच तनाव अब आम होने लगा है। सहनशीलता घटी है और तलाक की घटनाएं तेजी से सामने आ रही हैं। विवाहेत्तर संबंध, युवाओं में यौन संबंधी वर्जनाओं का खत्म होना भी रिश्तों में तनाव को जन्म दे रहा है।

14.6.6 परिवर्तन

आज के दौर में परिवर्तन की रफ्तार इतनी तेज हो गई है कि जब तक लोग एक बदलाव के मुताबिक खुद को ढालते हैं, नया परिवर्तन हो जाता है। भारतीय समाज अपेक्षाकृत एक ठहरा हुआ समाज है, जहां इतनी तेजी से आने वाले बदलाव एक मुश्किल समीकरण बनाते हैं। यह राजनीतिक हो सकता है, शिक्षा की नीति में आने वाला बदलाव हो सकता है और टेक्नोलॉजी में भी। तेजी से आने वाले उतार–चढ़ाव जॉब मार्केट यानी नौकरी के बाजार भी हो सकते हैं और फैशन के भी। इस तरह के परिवर्तन और उनसे उपजे संकट भी फीचर का विषय बन सकते हैं। 'आउटलुक' अपने 25 फरवरी 2004 के अंक में लिखता है –

''भारत में वैलेंटाइंस डे का यह बुखार पिछले एक दशक के दौरान चढ़ा है। महानगरों में ही नहीं, छोटे–छोटे कस्बों में भी नए वर्ष के समारोहों के गुजरने के बाद युवक–युवतियां वैलेंटाइंस डे का बेसब्री से इंतजार करते हैं। प्रेम की मार्केटिंग करने के लिए एक पूरा नया उद्योग खड़ा हो गया है। एक अखबार ने इसे सुपर स्टोरों और प्रेम का भव्य और विस्तृत प्रदर्शन करार दिया है।''

प्रेम गली न रही सांकरी (गीताश्री, आउटलुक, 25 फरवरी 2004)

14.7 लिखने के लिए आवश्यक योग्यता

इन विशिष्ट वर्गों पर लेखन के लिए किसी अतिरिक्त योग्यता की जरूरत नहीं है, मगर लिखने वाले में समाज में बहुत सूक्ष्म स्तर पर होने वाले बदलावों को भी पकड़ने की क्षमता होनी चाहिए। गौर करें तो मीडिया ने भी अपनी खबरों की प्राथमिकताएं बदली हैं। अब हादसे, राजनीति और अपराध के अलावा रहन–सहन और समाज में आ रहे बदलाव भी रोजमर्रा की खबरों का एक बड़ा हिस्सा होते हैं। दिक्कत सिर्फ इतनी है कि इन खबरों की यथावत प्रस्तुति के पीछे कोई दृष्टिकोण या नजरिया नहीं होता। अक्सर इन खबरों को बिकाऊ या सनसनीखेज बनाने पर जोर रहता है।

इसकी वजह से कई बार सामाजिक हलचलों की सुर्खियां नकारात्मक मूल्यों को ही प्रश्रय देने लगती हैं। ऐसी स्थिति में इन विषयों पर फीचर लिखने वाले की अहमियत और उसकी खुद की जिम्मेदारी बढ़ जाती है।

तेजी से बदलती प्रवृतियों और परिवर्तन के प्रति तटस्थ और विश्लेषणात्मक नजरिया भी विकसित करना जरूरी है। लेखक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने आसपास के सामाजिक परिवेश को महज दर्शक की तरह नहीं देखे, बल्कि प्रत्येक परिवर्तन या अप्रत्याशित सामाजिक घटनाओं की तह में जाने का प्रयास करे। उत्तर–औपनिवेशिक भारत की राजनीतिक–आर्थिक स्थितियों की समझ, विभिन्न संस्कृतियों और उनकी आपसी टकराहट की समझ और नई टेक्नोलॉजी और उसके समाज पर पड़ रहे प्रभाव के बारे में जानना भी जरूरी है। तभी हम उदारीकरण के बाद सामने आने वाले अपने ही आसपास के इन नए चेहरों की हकीकत और उनका दुख–दर्द समझ सकेंगे। यहां हम भारतीय युवाओं के एक अनछुए पहलू पर लिखे फीचर के कुछ हिस्से उदाहरण के तौर पर प्रस्तुत कर रहे हैं। आप देखेंगे कि यह फीचर खासा मार्मिक होने के बावजूद विषय की गहराई और गंभीरता के प्रति तीखे तेवर वाला है –

''कंपनी बाग में देसी फूल''

उन्हें यहां देखकर अनायास पीटर्सबर्ग में पढ़ने वाले दोस्तोएवस्की के आत्मपीड़ा में डूबे छात्र याद आते हैं। प्रयाग में खड़े होकर पीटर्सबर्ग को याद करने की वजह कोई बौद्धिक चोंचलापन नहीं है, सीधी–सी बात यह है कि सड़कों पर और गलियों में सबसे अधिक वही दिखते हैं। फिर भी अपने साहित्य में वे कहीं नजर नहीं आते, यह हिन्दी के बाबू टाइप लेखकों का मोतियाबिंद है, उसकी वजह से दोस्तोएवस्की और चेखेव से उधार मांगकर काम चलाना पड़ता है। साहित्य ही क्यों, वे वर्षों से नाटकों, फिल्मों और अखबारों में भी नहीं नजर आते। .....

सोने से दिल और लोहे के हाथों वाले ये लड़के कभी–कभार फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में जुगनू की तरह चमक उठते हैं फिर अंधियारे में खो जाते हैं, बहुत ढूंढने पर एक काशीनाथ सिंह, जिन्होंने 'अपना मोर्चा' में जीवन के जरिए विश्वविद्यालय को लेकर एक फंतासी बयान दिया है। 'अपना मोर्चा' शायद हिंदी का अकेला दुबला–पतला उपन्यास है, जिसमें ऐसे छात्रों की कहानी कही गई है, जो जब एडमिशन लेने जाते थे। तो उनके बालों में भूसे के तिनके फंसे होते थे और घुटनों पर बैलों की दुलत्ती के निशान पाए जाते थे, जो सड़क पर गरजते बैलों को सोकना और धौरा कहकर पहचानते थे, जो घर से सतुआ, पिसान और गुड़ लाते थे और जिनकी जांघे लंगोट की काछ से बरसात के दिनों में कट जाया करती थीं।

उपन्यासों और कहानियों से बेदखल होकर वे कहीं गए नहीं, वे यहीं हैं, हमारे अगल–बगल और पड़ोस में। वे इन दिनों भी डिग्री वाले विश्वविद्यालय से लेकर जीवन के टेढ़े–मेढ़े गलियारों तक अपने अस्तित्व की पीड़ा भरी लड़ाई लड़ रहे हैं। हो यह रहा है कि बाजार, कंपनियां, विश्वविद्यालय, सरकार और मीडिया इन दिनों छात्रों की जो चिकनी–चिकनी प्यारी–प्यारी छवियां बेच रहे हैं, उनकी चकाचौंध में धूप से पक कर कांसा हुए चेहरों वाले ये लड़के कहीं किनारे भकुआए खड़े रह जाते हैं, उन पर किसी की नजर नहीं जाती।

उनसे मिलना है तो आजकल किसी दिन दुपहरिया में कंपनी बाग आइए, विक्टोरिया टावर के पास किसी झुरमुट में तीन छल्ले की झूलन सीट और चौड़े कैरियर की इक्का–दुक्का साइकिलें दिखेंगी। गियर वाली डिजाइन छरहरी साइकिलों के बीच वे चौड़ी हड्डियों वाले मजबूत देहाती की तरह लगती हैं। इन्हें वे गांव से अपने साथ लाए हैं। वे हर महीने गांव जाते हैं और अनाज बेचकर पढ़ाई का खर्चा लाते हैं। वे औने–पौने अनाज बेचने की तकलीफ जानते हैं, इसीलिए घरों से शहर लौटते हुए जेब भरी होने के बावजूद गुमसुम रहते हैं। वे हमारे गांवों के सबसे होनहार लोग हैं जो बहुत ही क्रूर और सघन सामाजिक चयन से गुजरकर यहां पहुंचते हैं। वे अपने घर और ससुराल की आशाओं के केन्द्र हैं। वे खिड़कियां हैं, जो स्वप्नों की आधुनिक दुनिया में खुलती हैं।इन्हीं सपनों में जूझते ढेर सारे गांव जीते हैं। वे यहां कंपनी बाग की मुलायम अभिजन दूब पर बैठकर ऊंचे रुतबे की नौकरियों के लिए हर साल होने वाली प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करते हैं। कलक्टर, कप्तान या मुंसिफ होना उनके लिए बहुत दूर का सपना है। इस सपने की बात छोड़िए, उसका पीछा करने में ही बड़ा थ्रिल है। वे इसी रोमांच में जीते हैं। कंपनी बाग के रूमानी झुरमुटों में किताबों के साथ होना भी उनके लिए बड़ी चीज है क्योंकि वे सस्ते किराये की जिन कोठरियों में रहते हैं, पकाते हैं, वहां हवा और रोशनी के आने की मनाही है। वहां काइयां और लोलुप मकान मालिकों की पाबंदियां और नखरे हैं। चालीस वाट से ज्यादा पॉवर का बल्ब जलाने पर कोई बल्ब फोड़ देता है तो कोई रात में पाखाने में ताला लगाकर सोता है। ये लड़के किरासिन तेल की तलाश में जेब में परिचय–पत्र और हाथ में कनस्तर लिए लाइनों में लगते हैं। खर्च चलाने के लिए ट्यूशन पढ़ाते हैं। सेकेंड हैंड किताबों और किलो के भाव से बिकने वाली कापियों को तलाशते हैं। शहर की इन अंधेरी कोठरियों और क्लास में टिके रहने की जद्दोजेहद ही इनमें से कइयों को इतना थका डालती है कि उनकी टहनियों पर कमीजें लटकती मिलती हैं।

किताबों के इर्द–गिर्द उन्हें देखकर यह नतीजा निकालना कतई गलत होगा कि ये लड़के बहुत मेधावी हैं और उन सबमें ज्ञान की अदम्य पिपासा है। इनमें से ज्यादातर के लिए शिक्षा हांसिए जैसा कोई औजार है, जिससे वे अपने भविष्य के रास्ते में उगे झाड़–झंखाड़ की निराई करते हैं। अगर उनकी मेधा जाननी है तो उन्हें लार्ड मैकाले के नहीं, किसी और पैमाने पर जांचिए। आप इनमें से किसी को अंग्रेजी में सोशियोलॉजी लिखने को कहें और वह 'सुशीला जी' लिख दे तो हंसिए मत, वे आपको आधुनिक वर्णाश्रम और जातिवाद की सामाजिक इंजीनियरी कई दिन तक लगातार पढ़ा सकते हैं क्योंकि इसे उन्होंने पढ़ा और सुना नहीं, भोगा और जिया है।

अभी–अभी ग्राम पंचायतों के चुनाव बीते हैं, उसमें वे गले–गले तक डूबे थे। जातिवादी राजनीति का एक–एक पेंच वे जानते हैं।

यथार्थ की इस समझदारी और समाज से उनके गहरे सरोकारों की वजह से ही वे हमेशा संघर्षों के बीच फंसे नजर आते हैं। याद कीजिए, आपने आखिरी बार जो छात्रों का जुलूस देखा था उसके सबसे अधिक चेहरे कैसे थे? यही हैं वे जो लाठी चार्ज के बाद अस्पतालों में और गिरफ्तारी के बाद जेलों में सबसे अधिक पाए जाते हैं। वे चुपचाप लड़ते हैं और इस संघर्ष का कोई प्रतिदान नहीं मांगते और न ही शहरी बाबुओं की तरह 'आई हेट पॉलिटिक्स' जैसे जुमले बोलकर नकली हंसी हंसते हैं।

उनके बारे में इतनी बातचीत का सबब, एक अध्यापक का वह बयान है जिसमें उन्होंने कहा है कि उच्च शिक्षा सरकार का संवैधानिक दायित्व नहीं है। इधर देश की सरकार

उस दुकानदार जैसा सलूक कर रही है, जो शिक्षा को उन्हीं लोगों के हाथों बेचना चाहता है, जो उसकी ज्यादा कीमत दे सकें।

इस कठिन समय में गांवों के ये लड़के कहां जाएंगे? क्योंकि उनके पास पैसा ही नहीं है, बाकी सब कुछ है। कोई ताज्जुब नहीं कि आने वाले दिनों में आपको विश्वविद्यालय परिसरों में ये लड़के न दिखाई पड़े। वे कंपनी बाग में खिले देसी फूल हैं। उन्हें जी भर के देख लीजिए, क्या पता कल रहें न रहें।''

अनिल यादव (अमर उजाला, 17 अगस्त 2000)

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) रोजमर्रा के जीवन में नई टेक्नोलॉजी का दखल होने और उदारीकरण से किशोरों के जीवन में क्या परिवर्तन आया है? उदाहरण सहित विवेचना करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) महानगरों में बुजुर्गों का जीवन क्यों असुरक्षा और अकेलेपन का शिकार होता जा रहा है? इस पर कारणों सहित एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) भारतीय समाज में युवाओं की मौजूदा स्थिति पर आप क्या सोचते हैं? संक्षिप्त टिप्पणी लिखें ।

.....

.....

.....

.....

14.8 विषय का चयन

किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए फीचर लिखते वक्त हमें ध्यान रखना होगा कि अन्य विषयों के मुकाबले यह विषय एक खास तरह की संवेदनशीलता की मांग करता है। जब तक आप किशोरों, बुजुर्गों और युवाओं की समस्याओं से गहराई से जाकर

नहीं जुड़ेंगे, इन पर अच्छा फीचर तैयार नहीं हो सकेगा। खास बात यह है कि इन तीनों वर्गों के 'सामाजिक मनोविज्ञान' को समझना खासा मुश्किल होता है। समाज का प्रत्येक परिवर्तन इनमें बहुत गहराई से बदलाव लाता है। लिहाजा लिखने वाले में इन बदलावों की तह तक जाने की दिलचस्पी होनी चाहिए। आगे हम विषय के चयन पर ही थोड़ा विस्तार से विचार करेंगे।

14.8.1 रुचि और विशेषज्ञता

इन वर्गों के लिए लेखन की शुरुआती शर्त ही विशेषज्ञता है क्योंकि ये फीचर अपनी प्रकृति में ही विशिष्ट हैं, लिहाजा आपको अपनी दिलचस्पी के आधार पर इन विषयों में अपनी विशेषज्ञता बनानी चाहिए। यह भी ध्यान रखने वाली बात है कि आपकी दिलचस्पी तीनों ही वर्गों में समान रूप से नहीं हो सकती। संभव है कि किसी की दिलचस्पी किशोर वर्ग के लिए लेखन में हो, बुजुर्गों में नहीं; या फिर किसी को युवाओं के बारे में लिखना अच्छा लगता हो, किशोरों के बारे में उसकी कोई खास अवधारणा न हो। इसलिए यह बेहतर होगा कि अपनी दिलचस्पी को देखते हुए खास वर्ग के बारे में पर्याप्त जानकारी इकट्ठी की जाए। किशोरों और बुजुर्गों के बारे में जहां हमें लिखित सामग्री और शोध कार्य भी उपलब्ध हो सकता है, वहीं युवाओं के बारे में कई बार हमें ज्यादा प्रामाणिकता के लिए खुद के अवलोकन का भी सहारा लेना पड़ सकता है, क्योंकि युवाओं में तेजी से परिवर्तन देखने को मिलता है।

14.8.2 लेखन का उद्देश्य और प्रासंगिकता

लेखन का उद्देश्य उसकी प्रकृति को भी तय करता है। इन विशिष्ट वर्गों पर लेखन का आशय ही समाज के उस पहलू की तरफ पाठक का ध्यान आकृष्ट करना है, जो आमतौर पर मुख्यधारा की चर्चा का विषय नहीं होता है, अगर चर्चा होती भी है तो बहुत औपचारिक ढंग से और महज खानापूर्ति के लिए हमें इन तीनों वर्गों के अपने समय और समाज में आने वाले बदलावों से जोड़कर देखना होगा। यदि हम किशोरों के बारे में कुछ लिखना चाहते हैं तो उनकी सामाजिक–शैक्षिक गतिविधियों, उनके बीच पनपने वाले अपराध, उनकी सोच और व्यवहार में आ रहे बदलाव, नई टेक्नोलॉजी का उनके जीवन पर प्रभाव आदि को फीचर का विषय बना सकते हैं। इसी तरह बुजुर्गों के लिए लिखते वक्त हम उनके अकेलेपन, उनकी टूटन, उनके स्वास्थ्य समस्याओं को फोकस में रख सकते हैं।

14.8.3 प्रकाशन की प्रकृति

यह भी ध्यान में रखना होगा कि हम जिस समाचार पत्र या पत्रिका के लिए लिखना चाहते हैं, उसकी प्रकृति क्या है। इन दिनों बहुत–सी पत्रिकाएं किशोरों और युवाओं को ध्यान में रख कर विशेष फीचर पृष्ठ निकाल रही हैं। उनका लक्ष्य किशोर पाठकों के बीच पत्र को लोकप्रिय बनाना होता है। ऐसे फीचर पेज की भाषा–शैली और विषय थोड़ा भिन्न होंगे। इन्हीं के बारे में गंभीर प्रकृति की पत्र–पत्रिकाओं में लिखते वक्त प्रस्तुति का अंदाज और विषय का चयन थोड़ा अलग होगा। उदाहरण के तौर पर हम 'अमर उजाला' में छपने वाले फीचर सप्लीमेंट 'टीन वर्ल्ड' में छपे आलेखों के शीर्षक देखें तो बात और स्पष्ट हो जाएगी –

हम तो हैं जरा हट के...(कवर स्टोरी, पाठकों से पूछे सवालों के आधार पर सर्वे)

जब पढ़ो, सब पढ़ो (पढ़ाई के लिए टिप्स देने वाला आलेख)

टीचर फ्रेंड या फ्रेंडली टीचर्स (शिक्षक और छात्र के बीच के रिश्तों पर)

आत्मविश्वास, रहे हमेशा साथ (व्यक्तित्व विकास पर)

नई जींस, पुरानी सलवार (फैशन टिप्स)

बनो फिट एंड फाइन (खेलकूद पर)

वेलकम फ्रेशर्स, पार्टी इज ऑन (कॉलेज लाइफ)

(सभी आलेख अमर उजाला, 10 सितंबर 2005 के 'टीन वर्ल्ड' से)

उपर्युक्त शीर्षकों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये सभी आलेख खासतौर पर किशोर वर्ग के पाठकों की दिलचस्पी को ध्यान में रखते हुए तैयार किए गए हैं। इस तरह के आलेख लिखने के लिए आपको इन वर्गों की जीवन शैली और गतिविधियों को करीब से समझना होगा। युवाओं और बुजुर्गों के लिए लेखन करते वक्त भी इस बात का ध्यान रखना होगा कि आप किस प्रकृति की पत्रिका के लिए लिख रहे हैं। गौर करें कि 'दैनिक भास्कर' और नवभारत जैसे कुछ हिन्दी के समाचार पत्रों ने तो बुजुर्गों को ध्यान में रखते हुए उनके लिए पठनीय सामग्री निकालनी शुरू की है।

14.9 सामग्री का संकलन

इन वर्गों के लिए लिखते वक्त हमें हर बार भिन्न–भिन्न स्रोतों से सामग्री जुटानी होगी। सामग्री के स्रोत न सिर्फ किशोरों, युवाओं और बुजुर्गों को ध्यान में रखते हुए अलग होंगे, बल्कि इनमें भी लेख की प्रकृति, विषय के चयन और उसके प्रस्तुतिकरण को देखते हुए भिन्न होंगे। इस तरह देखें तो बहुत कुछ सामग्री के संकलन पर ही एक अच्छे फीचर का लिखा जा सकना संभव है। आइए, आगे हम इस पर थोड़ा और विस्तार से विचार करते हैं।

14.9.1 विषय पर शोध

किसी भी विषय पर लिखते समय उसकी शोधपरक जानकारी आवश्यक है। इसके अभाव में फीचर बेदम हो जाएगा। अखबारों में प्रकाशित होने वाले फीचर हजारों लोगों के लिए सूचना का स्रोत होते हैं, लिहाजा हमारी जिम्मेदारी बन जाती है कि हम फीचर में सटीक और प्रमाणिक जानकारी दें। इसके लिए यह आवश्यक है कि हम जो भी विषय चुनें उसके बारे में पर्याप्त शोध के बाद ही लिखना आरंभ करें। उदाहरण के लिए, हम महानगरों में अकेले रहने वाले बुजुर्गों पर कुछ लिखना चाहते हैं तो इस बारे में पहले से उपलब्ध कोई शोध सामग्री या आलेख जुटाने का प्रयास करना चाहिए। इसी तरह, यदि हम गरीबी के कारण पढ़ाई बीच में छोड़ने वाले किशोरों पर लिखना चाहते हैं तो इस बारे में किसी स्वयंसेवी संगठन की रिपोर्ट और उपलब्ध सरकारी आकड़ों के अलावा स्थिति का वास्तविक आकलन करने का प्रयास करना चाहिए।

14.9.2 तथ्यों का संकलन

फीचर लिखते समय विषय से जुड़े तथ्यों का संकलन बेहद जरूरी है। इनकी मदद से फीचर प्रभावशाली बनता है। उदाहरण के लिए, किशोरों के ताजा रुझान को लेकर 'अमर उजाला' के 10 सिंतबर 2005 के अंक में प्रकाशित फीचर 'हम तो हैं जरा हट के.....' में ग्राफ की मदद से बताया गया है कि कॉलेज में किशोर वर्ग के लोग अपने दोस्तों से किस तरह की बातें करते हैं। इसके मुताबिक, 22 प्रतिशत किशोर

लड़के–लड़कियों के बारे में चर्चा करते हैं, 45 प्रतिशत पढ़ाई की चर्चा करते हैं, 25 प्रतिशत की बातचीत का विषय फिल्में होती हैं तो सिर्फ आठ प्रतिशत की दिलचस्पी राजनीति में होती है।

14.9.3 साक्षात्कार

यदि किसी विषय पर पहले बहुत ज्यादा शोध नहीं हुआ या आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं तो ऐसी स्थिति में फीचर लेखक को केस स्टडी का सहारा लेना चाहिए। समस्या से प्रभावित बुजुर्गों से सीधा साक्षात्कार, उनकी समस्या का वास्तविक चित्रण, इन मुद्दों पर समाजशास्त्रियों और समाज के विभिन्न वर्गों की राय को मिलाकर एक अच्छा फीचर तैयार किया जा सकता है। साथ ही साक्षात्कार फीचर को ज्यादा दिलचस्प भी बनाते हैं।

14.9.4 फोटो और अन्य सामग्री

बदलते दौर की पत्रकारिता में फोटो और अन्य सामग्री फीचर को अखबार या पत्रिका के पन्नों पर ज्यादा आकर्षक बनाते हैं, लिहाजा इनकी मांग भी तेजी से बढ़ती जा रही है। अब संपादक किसी खास विषय को छोटे–छोटे, ग्राफ आंकड़ों और तस्वीरों के एक 'पैकेज' के तौर पर प्रस्तुत करना चाहते हैं। इसलिए फीचर तैयार करते समय ही इस बात की गुंजाइश बना लेनी चाहिए कि आलेख को कैसे फोटोग्राफ, कैरीकेचर, स्केच, ग्राफ आदि की मदद से सजाया जा सकता है। हम पत्रिका की मांग के मुताबिक अपने फीचर को ही कई हिस्सों में तोड़कर कुछ इनसेट बाक्स तैयार कर सकते हैं। कुछ रोचक तथ्यों को ग्राफ की मदद से प्रस्तुत किया जा सकता है। युवाओं और किशोरों के लिए लिखते वक्त तो इस बात का खास ख्याल रखना चाहिए।

14.10 सामग्री का संयोजन और संपादन

फीचर लिखने की कला इस बात पर निर्भर करती है कि आपने उपलब्ध सामग्री का किस तरह से इस्तेमाल किया है। विषय से संबंधित तथ्यों को इकट्ठा करने के बाद उनका चयन और फीचर में सटीक इस्तेमाल ही हमारे लेखन को आकर्षक बनाता है। यह आवश्यक नहीं है कि आपने जितनी जानकारी हासिल की है, वह सारी की सारी फीचर में इस्तेमाल कर डाली जाए। ऐसा करने से फीचर बोझिल और ऊबाऊ हो जाएगा। इसलिए उसका इस्तेमाल बात को वजनदार बनाने के साथ–साथ आकर्षक प्रस्तुति के लिए भी किया जा सकता है। देखें, उदाहरण–

''राहुल क्रिकेट का दीवाना था। पढ़ाई के अलावा उसका पूरा समय क्रिकेट पिच पर ही बीतता था। उस पर क्रिकेट का इतना जुनून सवार था कि गर्मी हो या सर्दी, शाम के चार बजे नहीं कि वह साइकिल पर बैट लगाकर ग्राउंड की ओर भागा। सभी उसे डांटते, कहते कि क्रिकेट से कैरियर नहीं बनता है, लेकिन आज स्पोर्ट्स कोटे से मिली सरकारी नौकरी ने सबकी बोलती बंद कर दी है।''

बी स्पोर्टी, विद स्पोर्टस (अभिषेक मेहरोत्रा, अमर उजाला, 10 सितंबर 2005)

14.11 फीचर लेखन

अब तक आप विषय की गंभीरता और गहराई को भली–भांति समझ गए होंगे। आप यह भी जान गए होंगे कि किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग पर लेखन के लिए किन बातों का ध्यान रखना चाहिए और कैसे उन पर लिखने के लिए विषय का चयन किया जा सकता है। आइए, अब फीचर लेखन की शुरुआत करते हैं। यहां हम फीचर के शैलीगत ढांचे और उसकी भाषा से जुड़े कुछ बुनियादी मुद्दों पर चर्चा करेंगे।

14.11.1 आरंभ

फीचर का आरंभ दिलचस्प होना चाहिए। इसकी शुरुआत ऐसी होनी चाहिए कि पाठकों के सामने फीचर की विषय वस्तु न सिर्फ स्पष्ट हो जाए, बल्कि उनमें आगे पढ़ने की उत्सुकता बनी रहे। आमतौर पर किसी प्रसंग, घटना, ब्यौरे या साक्षात्कार के माध्यम से फीचर की शुरुआत करना उसे जीवंत बनाता है। इससे पाठकों के मन में न सिर्फ फीचर के प्रति, बल्कि मूल विषय के प्रति भी उत्सुकता का संचार होता है। एक उदाहरण देखें –

''यहां के हम सिकंदर, चाहें तो रख लें सबको अपनी जेब के अंदर, कॉलेज में कदम रखा नहीं कि दिमाग के अंदर यही धुन गूंजने लगती है और धुन का असर दिखाई देता है तुम्हारे डेली रूटीन और बिहेवियर पर। सुबह जब तक कोई चादर न खींच ले, बिस्तर नहीं छूटेगा। दोस्त ने बर्थ–डे पार्टी पर बुलाया है, रात में जाना है। घर में किसी ने मना किया, तो बस हंगामा...बड़े हो गए हैं, अपना अच्छा–बुरा समझ सकते हैं, वगैरह, वगैरह। कॉलेज में फ्री पीरियड है, तो चल दिए किसी रेस्ट्रां में, लाइब्रेरी में तो मग्गू जाते हैं और आप तो...।।''

ड्रॉ योर लाइन्स (रिंकी, अमर उजाला 10 सितंबर 2005)

यदि उपर्युक्त बातों को सपाट तरीके से उपदेशात्मक लहजे में लिख दिया जाता तो शायद ही किसी को दिलचस्पी इसे पढ़ने में होती। चूंकि यह फीचर खासतौर पर किशोरों और युवाओं को ध्यान में रखकर लिखा गया है, इसलिए इसकी भाषा और शुरुआत करने का तरीका भी अलग किस्म का है। शैली जानबूझकर अनौपचारिक रखी गई है और बात को युवाओं में सामान्य पाई जाने वाली गतिविधियों से जोड़कर कहने का प्रयास किया गया है।

14.11.2 मध्य

फीचर का मध्य भाग सबसे महत्वपूर्ण होता है। बहुत दिलचस्प शुरुआत के बावजूद यदि हम इस मध्य भाग को बेहतर नहीं बना सके तो पूरे फीचर का संतुलन बिगड़ जाएगा और वह बेदम हो जाएगा। अतः इस हिस्से को तैयार करने में हमें काफी मेहनत करनी चाहिए। आमतौर पर विषय से संबंधित सभी बातों पर विस्तार से चर्चा मध्य भाग में ही होती है। मुख्य विषय पर गंभीरता से चर्चा भी फीचर के इसी हिस्से में होती है। इसके लिए तथ्यों का बेहतर प्रस्तुतिकरण, बातचीत, साक्षात्कार, आंकड़ों आदि का भरपूर इस्तेमाल करना चाहिए। एक उदाहरण और देखें –

''कलक्टर, कप्तान या मुंसिफ होना उनके लिए बहुत दूर का सपना है। इस सपने की बात छोड़िए, उसका पीछा करने में ही बड़ा थ्रिल है। वे इसी रोमांच में जीते हैं, बाग के रूमानी झुरमुटों में किताबों के साथ होना भी उनके लिए बड़ी चीज है। वे सस्ते

किराये की जिन कोठरियों में रहते हैं, पकाते हैं, वहां हवा और रोशनी के आने की मनाही है। वहां काइयां और लोलुप मकान मालिकों की पाबंदियां और नखरे, चालीस वाट से ज्यादा पॉवर का बल्ब जलाने पर कोई बल्ब फोड़ देता है तो कोई पाखाने में ताला लगाकर सोता है। ये लड़के किरोसिन तेल की तलाश में जेब में परिचय–पत्र और हाथ में कनस्तर लिए लाइनों में लगते हैं। खर्च चलाने के लिए ट्यूशन पढ़ाते हैं। सेकेंड हैंड किताबों और किलो के भाव से बिकने वाली कापियां तलाशते हैं। शहर की इन अंधेरी कोठरियों और क्लास में टिके रहने की जद्दोजेहद इनमें से कइयों को इतना थका डालती है कि उनकी पसलियों पर कमीजें लटकती मिलती हैं।''

कंपनी बाग में देसी फूल (अनिल यादव, अमर उजाला, 17 अगस्त 2004)

यहां गौर करें कि उपर्युक्त उद्धरण में लेखक किस तरह अपनी बात को विस्तार दे रहा है। इससे पाठकों को विषय के प्रति जागरूक और संवेदनशील बनाने का 'स्पेस' तैयार होता है। इस उदाहरण में गांव–देहात से आने वाले नौजवानों के रोजमर्रा के जीवन की दिक्कतों को इस तरह सामने रखा गया है कि ये सिर्फ उनकी दिक्कतें भर नहीं रह जातीं, बल्कि यह उनके पूरे जीवन संघर्ष को सामने रख देता है।

14.11.3 अंत और शीर्षक

फीचर को समाप्त करने में एक खास तरह का कौशल होना चाहिए। कोशिश करनी चाहिए कि फीचर का अंत चुस्त हो और अब तक कही बात को समेटने का प्रयास हो। यदि अंत में किसी किस्म का बिखराव या अस्पष्टता दिखी तो मेहनत बेकार हो जाएगी। पीछे कही बातों का भी पाठक पर प्रभाव नहीं पड़ेगा और फीचर बेअसर हो जाएगा। इसी तरह, शीर्षक भी बहुत सपाट किस्म के नहीं होने चाहिए। शीर्षक संक्षिप्त और आकर्षक होने चाहिए। ध्यान देने वाली बात यह है कि नई पीढ़ी के लिए लिखते वक्त उनके बीच प्रचलित नए मुहावरों का हमें विशेष खयाल रखना चाहिए। इनका इस्तेमाल करने से शीर्षक ज्यादा आकर्षक बनते हैं। किशोरों तथा युवाओं के लिए फीचर लिखते वक्त तो इस बात का खास ध्यान देना होगा कि उसकी शैली पाठकों के मूड से मेल खाती हो। उदाहरण देखें –

''कॉलेज का एक साल कैसे गुजर जाएगा, पता ही नहीं चलेगा। सीनियर बनते ही रैगिंग के प्रति दृष्टिकोण भी बदल जाएगा। आप इस बात पर यकीन करने लगेंगे कि थोड़ी बहुत रैगिंग सबकी होनी चाहिए क्योंकि तब तक रैगिंग के फायदे आपकी समझ में भी आने लगेंगे। खासतौर पर सपनों के आकाश से वापस धरती पर रैगिंग की बदौलत मिली पटखनी से महसूस हो जाएगा कि 'बच्चू, अब तू बड़ा हो गया है।''

बच्चू, अब तू बड़ा हो गया है (प्रतिमा पांडेय, अमर उजाला, 3 जुलाई 2004)

14.12 भाषा–शैली

किशोरों के लिए लिखते वक्त भाषा के प्रति खासतौर पर सजगता बरतना जरूरी है। हमें उनके बीच प्रचलित शब्दावली और मुहावरों का ध्यान रखना होगा। नई पीढ़ी तक घिसी–पिटी भाषा के जरिए नहीं पहुंचा जा सकता। यदि हमारा फीचर गंभीर मुद्दे पर विमर्श कर रहा है तो भाषा की प्रकृति भी गंभीर हो सकती है, पर उसमें प्रवाह और सहजता अवश्य होनी चाहिए। उदाहरण देखें –

''किताबों के इर्द–गिर्द उन्हें देखकर यह नतीजा निकालना कतई गलत होगा कि ये लड़के बहुत मेधावी हैं और उन सबमें ज्ञान की अदम्य पिपासा है। इनमें से ज्यादातर के लिए शिक्षा हंसिए जैसा कोई औजार है, जिससे वे अपने भविष्य के रास्ते में उगेझाड़–झंखाड़ की निराई करते हैं। अगर उनकी मेधा जाननी है तो उन्हें लार्ड मैकाले के नहीं, किसी और पैमाने पर जांचिए। आप इनमें से किसी को अंग्रेजी में सोशियोलॉजी लिखने को कहें और वह सुशीला जी लिख दे तो हंसिए मत, वे आपको आधुनिक वर्णाश्रम और जातिवाद की सामाजिक इंजीनियरी कई दिन तक लगातार पढ़ा सकते हैं क्योंकि इसे उन्होंने पढ़ा और सुना नहीं, भोगा और जिया है।''

कंपनी बाग के देसी फूल (अनिल यादव, अमर उजाला, 17 अगस्त 2000)

पिछले कुछ सालों में अखबारों ने भाषा के बदलाव पर खास ध्यान दिया है। इसकी एक बड़ी वजह टेलीविजन के जरिए लोगों तक पहुंची हिंदी–अंग्रेजी की मिश्रित भाषा है, जिसे आम बोलचाल में 'हिंगलिश' भी कहते हैं। लिहाजा फीचर के लिए हमें विषयानुकूल भाषा गढ़नी होगी। यदि हम किशोरों और युवाओं के रोजमर्रा के जीवन को अपने फीचर का विषय बना रहे हैं तो हमें वैसी ही भाषा भी इस्तेमाल करनी चाहिए। एक उदाहरण देखें –

''वैसे तो रैगिंग से पहले भी कई ऐसे मौके आते हैं, जिनमें हमें अपना गुस्सा काबू करने का सबक मिल ही जाता है। लेकिन फिर भी बड़े भाई, पापा या मम्मी की सरपरस्ती के कारण हम थोड़ा तुनकमिजाज होते ही हैं। ऐसे में रैगिंग सारे कस–बल निकाल देती है। तब समझ में आता है कि क्यों घर के बड़े कुछ मामलों में शांत रहकर व्यवहार करते हैं और हमें बेवजह भुजाएं फड़काने को मना करते रहते हैं। सीधे शब्दों में कहें तो नए ऊंटों को पहाड़ों के नीचे आने का अनुभव हो जाता है। इसलिए सब सीधी राह भी चलने लगते हैं, क्योंकि जरा–सी चूं–चपड़ की नहीं कि सीनियर्स मिट्टी पलीद करने में देर नहीं लगाएंगे। एक दिन की जबरदस्त खिंचाई के बाद जब दूसरे दिन कॉलेज पहुंचते ही कोई सीनियर आपको नाम से बुलाए और साथ ही जूनियर इस पर आपको मुड़कर देखें, तो मन में जरूर आता है कि वाह, मैं तो फेमस हो गया। ऐसी छोटी–छोटी घटनाएं बहुत आत्मविश्वास देती हैं।''

बच्चू, अब तू बड़ा हो गया है (प्रतिमा पांडेय, अमर उजाला, 3 जुलाई 2004)

बोध प्रश्न –2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) सामग्री संकलन में तथ्यों के संकलन का क्या महत्व है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) युवाओं से सम्बन्धित किसी फीचर का अंत किस प्रकार किया जाना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

14.13 सारांश

- इस इकाई में हमने देखा कि कैसे उदारीकरण के बाद वाले दौर में किशोर, युवाओं और बुजुर्गों की सामाजिक स्थिति और उनकी भूमिका में बदलाव आया है। हमने इसके कारणों को समझते हुए यह जानने का प्रयास किया कि मौजूदा पत्रकारिता किस तरह इन वर्गों पर फोकस कर रही है और उनमें फीचर लेखन की क्या संभावनाएं हैं।

- हमने तीनों वर्गों की सामाजिक स्थितियों का अलग–अलग विश्लेषण किया और उन पर लिखे जाने वाले फीचर के विषय क्षेत्र पर विस्तार से विमर्श किया। हमने यह समझने का प्रयास किया कि आज के युवा, किशोर और बुजुर्ग किस तरह की समस्याओं से दो–चार हो रहे हैं। साथ ही इन वर्गों से जुड़े कौन से प्रमुख मुद्दे हैं, जिन पर फीचर तैयार किया जा सकता है।

- इस इकाई में हमने किशोर, युवा और बुजुर्ग वर्ग के लिए लिखे जाने वाले फीचर का विषय चुनने से लेकर इन पर लिखे जाने वाले फीचरों के उद्देश्य और प्रासंगिकता, सामग्री के संकलन की विधि, सामग्री के संयोजन और संपादन के तरीके तथा भाषा–शैली पर विस्तार से विचार किया। हमने यह समझा कि इस तरह के फीचर का पूरा कलेवर किस तरह से तैयार किया जा सकता है, जिससे हमें किशोरों, युवाओं और बुजुर्गों के बारे में फीचर लिखने में आसानी हो सके।

अभ्यास

1) यदि आपको किशोरों के बीच इंटरनेट पर होने वाली मित्रता पर एक फीचर तैयार करना है तो उसकी भाषा–शैली में किन बातों का ध्यान रखेंगे? कारण सहित अपनी बात को स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) बढ़ते अकेलेपन और एकल होते परिवारों को देखते हुए बुजुर्गों ने भी अपनी जीवन–शैली बदली है। इस विषय पर आपको एक फीचर तैयार करना है। इस सिलसिले में आप किस तरह से सामग्री का संकलन और संयोजन करेंगे? संक्षेप में बताएं।

.....

.....

.....

.....

.....

3) आपराधिक गतिविधियों के प्रति युवाओं के झुकाव पर फीचर तैयार करने के लिए आपको किस तरह के तथ्यों और आंकड़ों की जरूरत पड़ेगी? संक्षेप में बताएं।

.....

.....

.....

.....

.....

14.14 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. देखिए, उपभाग 14.5.2 उदाहरण स्वयं तैयार कीजिए।
2) देखिए, उपभाग 14.5.3 उदाहरण स्वयं भी विचार कीजिए।
3) इकाई में व्यक्त विचारों के आलोक में टिप्पणी तैयार कीजिए।

बोध प्रश्न– 2

1) इसका महत्व सर्वाधिक होता है। देखिए, उपभाग 14.9.2
2) देखिए, उपभाग 14.11.3

अभ्यास के लिए दिए गए प्रश्नों के उत्तर स्वयं लिखिए।

इकाई 15 शहरी वर्ग के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 शहरी वर्ग के लिए लेखन का अभिप्राय

15.3 शहरी वर्ग के लिए लेखन का महत्व

15.4 सामाजिक पृष्ठभूमि

15.5 शहरी वर्ग के संबंध में लेखन के विभिन्न क्षेत्र

- 15.5.1 लोग और लोकाचार
- 15.5.2 शहरी जीवन में संघर्ष
- 15.5.3 शहरों की धरोहर

15.6 विषय पर लेखन के प्रकार

- 15.6.1 बदलता शहरी समाज
- 15.6.2 शहरी मध्यवर्ग
- 15.6.3 शहरों में बढ़ते अपराध और असुरक्षा
- 15.6.4 शहरी गरीब तबका और मलिन बस्तियां
- 15.6.5 शहरी कामकाजी जीवन
- 15.6.6 शहरी नियोजन और नागरिकता

15.7 शहरी जीवन पर लेखन के लिए आवश्यक योग्यता

15.8 विषय का चयन

- 15.8.1 रुचि और विशेषज्ञता
- 15.8.2 लेखन का उद्देश्य और प्रासंगिकता
- 15.8.3 प्रकाशन की प्रकृति

15.9 सामग्री का संकलन

- 15.9.1 विषय पर शोध
- 15.9.2 तथ्यों का संकलन
- 15.9.3 साक्षात्कार
- 15.9.4 फोटो और अन्य सामग्री

15.10 सामग्री का संयोजन और संपादन

- 15.10.1 आरंभ
- 15.10.2 मध्य
- 15.10.3 अंत और शीर्षक

15.11 भाषा–शैली

15.12 सारांश

15.13 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

15.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप शहरी वर्ग को ध्यान में रखकर लिखे जाने वाले फीचर के बारे में व्यावहारिक ज्ञान हासिल कर सकेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- शहरी वर्ग के बारे में लिखे जाने वाले फीचर की विषयवस्तु और सामाजिक पृष्ठभूमि की समझ हासिल कर सकेंगी/सकेंगे;
- शहरी जीवन पर फीचर लेखन के महत्व और पत्रकारिता में उसकी जरूरतों को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- यह जान सकेंगी/सकेंगे कि शहरी जीवन को केन्द्र में रखकर किन क्षेत्रों में फीचर लेखन किया जा सकता है;
- फीचर लेखन के लिए विषय के चयन तथा उसके लिए आवश्यक तैयारी के बारे में व्यावहारिक ज्ञान हासिल कर सकेंगी/सकेंगे तथा
- फीचर के आरंभ, मध्य और अंत की तकनीकी जानकारी और इस तरह के फीचर में इस्तेमाल होने वाली भाषा–शैली की जानकारी हासिल करते हुए शहरी जीवन पर एक बेहतर फीचर लेखन की क्षमता का विकास कर सकेंगी/सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

यह समाचार पत्रों के लिए फीचर लेखन से संबंधित व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम की 15वीं इकाई है। इस इकाई में हम आपको शहरी जीवन पर लिखे जाने वाले फीचर के बारे में जानकारी देंगे। हम आपको बताएंगे कि बदलते समय के साथ भारतीय समाज में शहरों की भूमिका में क्या फर्क आया है। किस तरह उदारीकरण के बाद भारतीय शहरों के मिजाज में व्यापक बदलाव देखने को मिलता है। हम यह समझने का भी प्रयास करेंगे कि वह कौन से बदलाव हैं जिनको शहरी वर्ग के लिए लेखन के समय ध्यान रखना चाहिए और किस तरह इनकी समझ हमें एक अच्छे फीचर की विषयवस्तु तैयार करने में मददगार साबित होगी। हम विस्तार से बदलती सामाजिक पृष्ठभूमि और भारत के आर्थिक–सामाजिक परिदृश्य में आए बदलावों के संदर्भ में शहरी जीवन की पड़ताल करेंगे। हम यह देखेंगे कि वे कौन से प्रमुख मुद्दे हैं, जिनके आधार पर फीचर तैयार करने के लिए दिशा–संकेत मिल सकते हैं। इस तरह के फीचर में प्रयोग होने वाली भाषा–शैली और उसकी बुनावट पर अलग से विचार किया जाएगा। इससे आपको इन वर्गों पर लिखे जाने वाले फीचर की प्रस्तुति को बेहतर बनाने में मदद मिलेगी।

15.2 शहरी वर्ग के लिए लेखन का अभिप्राय

शहरी वर्ग के लिए लेखन दरअसल भारतीय पत्रकारिता की एक नई अवधारणा है, जिसका विकास सन् 1990 और उसके बाद के दशकों में हुआ है। ऐसा नहीं है कि इससे पहले पत्रकारिता का फोकस शहरी वर्ग पर नहीं था, मगर उदारीकरण के बाद शहरी तबका देश की सामाजिक–सांस्कृतिक संरचना और अर्थव्यवस्था में निर्णायक भूमिका अदा करने लगा। मध्यवर्ग का तेजी से उदय हुआ और भारतीय दुनिया के सामने सबसे बड़े भावी उपभोक्ताओं के रूप में सामने आए। इस शहरी वर्ग की एक अलग जीवन–शैली और जरूरतें थीं। नतीजे में मुख्यधारा की पत्रकारिता इनकी लंबे

समय तक उपेक्षा नहीं कर सकी। एक बदलते समाज का अक्स अखबारों और पत्रिकाओं में भी नजर आने लगा। नीचे दिए गए इस फीचर से मीडिया के बदलते रुख की तस्वीर और साफ होती है।

''अखबारों के पेज थ्री, पर छाई रहने वाली तमाम तस्वीरें और ब्यौरे इन पार्टियों की चकाचौंध–वहां मौजूद तमाम नामी–गिरामी हस्तियाँ और सेलिब्रिटी का बयान छपता है। कुछ विश्लेषकों का मानना है कि एक्जीक्यूटिव क्लास के लोगों के कामकाज के तौर–तरीकों और जीवन–शैली में आमूलचूल बदलाव आया है। काम के लंबे घंटे, तनाव और प्रतिस्पर्धा की वजह से अब उनके लिए जीवन में थोड़ा–सा एडवेंचर या रिलीफ बहुत आवश्यक बन गया है। किस्म–किस्म की पार्टियों के रूप में वे अपनी इसी जरूरत को पूरा कर रहे हैं।''

पार्टी, पार्टी और पार्टी (विद्युत, हिन्दुस्तान, 4 जुलाई 2004)

इस तरह से देखें तो शहरी जीवन–शैली, बदलते रुझान, फैशन, इस तबके की बदलती सोच, शहरी वर्ग की दिक्कतें, शहरी मध्यवर्ग और निम्न मध्यवर्ग का जीवन, उनके संघर्ष, उम्मीदें और सपने पत्रकारिता का अहम हिस्सा बन गए हैं। इस नए मगर सशक्त और प्रभावशाली वर्ग के बीच अपनी पकड़ बनाने के लिए पत्रकारिता ने खासतौर पर उन पर केन्द्रित लेखन को तरजीह देना शुरू किया। इस इकाई में जब हम आगे इस विषय पर विस्तृत चर्चा करेंगे तो शहरी वर्ग के लिए फीचर लेखन से यही अभिप्राय होगा।

15.3 शहरी वर्ग के लिए लेखन का महत्व

शहरी वर्ग ने दरअसल भारतीय पत्रकारिता में आने वाले बदलावों में केंद्रीय भूमिका निभाई है। पत्रकारिता के बदलते चरित्र की वजह दरअसल इसी वर्ग के चरित्र और सोच में आया बदलाव है। जब तक भारतीय शहरी परंपरागत सोच और समाज का प्रतिनिधित्व करता था, हमारी पत्रकारिता भी परंपरागत मूल्यों को लेकर चलती थी और उसका दायरा भी राजनीतिक घटनाक्रम, परिवार, रहन–सहन के तरीकों तक सीमित था। बाद के दौर में उपभोक्तावादी मूल्यों में तेजी से आए उछाल की वजह से पूरे भारतीय समाज में बड़ा फर्क देखने को मिला। लोगों की सोच, रहन–सहन, तौर–तरीके में इतनी तेजी से परिवर्तन आया कि पत्रकारिता भी उससे अछूती नहीं रह सकी। भारतीय मध्यवर्ग पर प्रामाणिक समझी जाने वाली किताब 'द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लॉस' में पवन कुमार वर्मा इन्हीं बदलावों को इंगित करते हुए लिखते हैं –

''भारत ने 1991 में आर्थिक सुधारों का अभियान शुरू किया और अर्थव्यवस्था के दरवाजे खोलकर विदेशी पूंजी के लिए पलक–पांवड़े बिछा दिए। यही वह प्रक्रिया थी जिसके कारण मध्यवर्ग पर नए सिरे से रोशनी पड़ी। उसके संख्यात्मक आकार पर बहस शुरू हो गई। उसकी उपभोग संबंधी पसंद–नापसंद का आंकलन किया जाने लगा और अंदाजा लगाया जाने लगा कि आने वाले वर्षों में मध्यवर्ग किस रफ्तार से बढ़ेगा।''

प्राक्कथन से ('द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास'–पवन कुमार वर्मा)

लिहाजा भारतीय पत्रकारिता में भी एक अलग मिजाज के शहरी वर्ग की घुसपैठ दरअसल उस परिवर्तन की लहर का एक हिस्सा थी, जिसे भारतीय समाज जीवन के

प्रत्येक क्षेत्र में घटित होते देख रहा था। पत्र–पत्रिकाओं के इस बदलते तेवर का स्वर भी अलग–अलग था। मुख्यधारा की पत्रकारिता में दो किस्म का लेखन सामने आया। एक तरफ अखबारों और पत्रिकाओं में शहरी जीवन–शैली को प्रमुखता से छापा गया तो दूसरी तरफ मीडिया उस वर्ग की जीवन–शैली और रहन–सहन को सामने लाने का माध्यम बन गया जो उपभोक्तावादी शहरी समाज को तैयार करने में अग्रणी भूमिका निभा रहा था। उदाहरण देखें –

''पहले केवल कारपोरेट पार्टियां होती थीं। आज कारपोरेट, प्राइवेट और बिजनेस पार्टियों का जोर है और मीडिया की मार्फत उनका ग्लैमर समाज में एक स्थान बना चुका है। कुछ लोग ही होते हैं इन पार्टियों में, लेकिन समाज का वह बहुसंख्यक वर्ग जो ऐसी पार्टियों को अखबारों, पत्रिकाओं या टी.वी पर ही देख पाता है, इनके प्रति उसकी उत्सुकता भी कुछ कम नहीं है। यानी समाज पर इन पार्टियों का एक प्रभाव पड़ रहा है, ऐसा लगता।''

पार्टी, पार्टी और पार्टी (विद्युत, हिन्दुस्तान, 4 जुलाई 2004)

इस सबसे हटकर पत्रकारिता की जो धारा इस बदलाव के चकाचौंध से भरे या उसके उजले पहलू भर को नहीं देखती, उसका रुख शहरी जीवन के प्रति आलोचनात्मक होता है। यहां शहरी जीवन की दिक्कतों को व्यापक विमर्श का विषय बनाया जाता है। परिवर्तन के कारणों की पहचान की जाती है और उसके पीछे काम कर रही ताकतों की पड़ताल होती है। इस किस्म के लेखन में नष्ट होती शहरी जीवन की परंपराओं को भी पहचानने का प्रयास किया जाता है। यहां शहरी नियोजन, मलिन बस्तियों की समस्या, मध्यवर्ग की दिक्कतें और शहरी परिवेश में बच्चों–स्त्रियों के जीवन पर फोकस लेखन के लिए भी संभावनाएं बनती हैं। 'आउटलुक' में 18 अगस्त 2003 को छपे फीचर 'आसमान का आशियाना' का यह अंश उदाहरण के तौर पर देखें –

''पटना में 25 हजार से अधिक लोग ऐसे हैं जो फुटपाथ पर जिंदगी बिता रहे हैं। जहांनाबाद का जगत प्रसाद इनमें से एक है जो स्टेशन के पास लिट्टी बनाकर बेचता है और उसके पास फुटपाथ पर सोता है। मुंह अंधेरे फुटपाथ पर ही अपने चूल्हे पर वह लिट्टी पकाने की तैयारी में जुट जाता है। उसके ज्यादातर ग्राहक स्टेशन के कुली, रिक्शावाले और भिखारी हैं। गांधी मैदान से लेकर म्यूजियम, चिड़ियाखाना के किनारे फुटपाथ से लेकर अगमकुआं शीतला मंदिर, पटना और नालंदा मेडिकल कॉलेज हॉस्पिटल से सटे फुटपाथ पर भी अपने–अपने इलाके से दरबदर लोग दुनिया जमाए हुए हैं।''

आसमान का आशियाना (आउटलुक, 18 अगस्त 2003)

उपर्युक्त विश्लेषण और उदाहरणों से यह साफ हो जाता है कि शहरी वर्ग के लिए लेखन फीचर का एक अहम हिस्सा है। शहरी वर्ग न सिर्फ व्यापक सामाजिक–सांस्कृतिक विमर्श का हिस्सा है, बल्कि भारतीय पत्रकारिता में यह केंद्रीय महत्व रखता है। शहरी वर्ग के लिए बेहतर फीचर लेखन के लिए हमें इस वर्ग की सामाजिक पृष्ठभूमि को भी समझना होगा। आगे हम इसी बिंदु पर विस्तार से विचार करेंगे।

15.4 सामाजिक पृष्ठभूमि

आजादी के बाद भारतीय समाज में आए किसी बड़े बदलाव को समझना हो तो हमें शहरों की तरफ ही देखना होगा। हमें याद होगा कि चालीस–पचास के दशक की 'श्री चार सौ बीस' और 'शहर और सपना' जैसी फिल्मों में शहर लोगों की तमाम इच्छाओं और सपनों का प्रतीक बनकर आता था। बेरोजगारी, गरीबी और जीवनयापन के साधनों की तलाश में लाखों लोग शहरों की तरफ पलायन करते रहे। इस सबके बावजूद देश की प्रतीकात्मक छवि को गांवों से जोड़कर देखा जाता रहा। सन् 1990 के बाद से शहरों का तेजी से विकास हुआ। यह विकास इतना अकल्पनीय था कि हमें समाजशास्त्रियों या अर्थशास्त्र के जानकारों से पहले की गई लोकप्रिय भविष्यवाणी भी नहीं मिलती। 'इंडिया टुडे' 20 अगस्त 2003 के अंक में इन बदलावों का विश्लेषण करते हुए लिखता है –

''1991 में शुरू हुए आर्थिक उदारीकरण पर लगातार बहस हो सकती है, लेकिन यह स्पष्ट है कि इस दौर में सुधारों की गति सबसे तेज रही। बड़े नीतिगत परिवर्तनों के साथ–साथ लोगों की मानसिकता भी बदली, लाइसेंस राज खत्म हुआ, केंद्रीय करों में कमी की गई और उद्योगों पर सार्वजनिक क्षेत्र के एकाधिकार को कम किया गया। 44 वर्ष की राजनीतिक आजादी के बाद आर्थिक आजादी का युग शुरू हुआ।''

(इंडिया टुडे, 20 अगस्त 2003)

यह आर्थिक आजादी हिन्दुस्तान में सबसे तेजी से बढ़ रहे तबके मध्यवर्ग को खूब रास आई। पहली बार आम लोगों के जीवन में सांस्कृतिक परिवर्तन साफ नजर आने लगा। वन–शैली में बदलाव आया और वर्जनाएं टूटने लगीं। भारतीय मध्यवर्ग में संयमित तौर–तरीकों की बजाय उपभोक्तावादी रुझान दिखाई देने लगे। इस परिवर्तन के कई कारण थे। आर्थिक स्तर पर इसे उदारीकरण के बाद बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पांव पसारने से मिले रोजगार के नए अवसर, भारतीयों को अंतराष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाने के मौके और उदार अर्थव्यवस्था के चलते कारोबारियों को मिले तमाम अवसरों में देखा जा सकता है। सांस्कृतिक स्तर पर बाजार–केंद्रित अर्थव्यवस्था ने भी लोगों की जीवन–शैली पर खासा असर डाला। 'द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास' में पवन कुमार वर्मा भारतीय मध्यवर्ग में आए इन परिवर्तनों के कारणों की पड़ताल करते हुए लिखते हैं –

''लगभग हर उपभोक्ता वस्तु को किस्तों पर खरीदा जा सकता था। मनचाहा उत्पाद खरीदने के लिए उचित स्रोत से उचित ऋण दिलाने के लिए फर्मे नए–नए तरीके ईजाद करने में लगी हुई थीं। देखते–देखते क्रेडिट कार्ड का कारोबार 1600 करोड़ का आंकड़ा पार कर गया। करीब दस लाख से ज्यादा भारतीय ऐसे थे जिन्होंने किफायती रहन–सहन के आग्रहों से पल्ला झाड़ लिया था। पहले ये लोग कर्जा लेने से डरते थे लेकिन अब वे क्रेडिट कार्डधारक बन चुके थे। 1995 में मास्टर कार्ड ने भारतीयों में 106 फीसद की वृद्धि दर्ज की। एशिया प्रशांत क्षेत्र में यह वृद्धि–दर सर्वाधिक थी।

सांस्कृतिक स्तर पर शहरी जीवन को बदलने में सेटेलाइट टेलीविजन और मनोरंजन व अन्य साधनों की भी अहम भूमिका रही। हालात इस कदर बदले कि छोटे–छोटे शहरों में फैशन शो होने लगे और वेलेंटाइन–डे ने अचानक एक बड़े उत्सव का रूप धारण कर लिया।''

पवन कुमार वर्मा आगे लिखते हैं :

एक खास तरह की जीवन–शैली और रहनसहन की तलाश में व्यस्त मध्य वर्ग पर उपग्रहीय चैनलों के इस छवि निर्माण का भारी असर पड़ना स्वाभाविक था। पांचवें राष्ट्रीय पाठक सर्वेक्षण ने जानकारी दी कि सभी शहरी घरों की 3/5 संख्या में टी.वी सेट आ गए हैं और अब इस माध्यम की पहुंच 1990 के नौ फीसद से बढ़कर 1995 में 74 फीसद हो गई है। बेशकीमती उपभोक्ता वस्तुएं मध्यवर्ग की नवविकसित आकांक्षाओं का प्रतीक चिह्न बन गई।''

(द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास–पवन कुमार वर्मा)

इससे यह अंदाजा लगाना गलत होगा कि उदारीकरण भारतीय मध्यवर्ग के जीवन में सिर्फ खुशहाली लेकर आया। नई अर्थव्यवस्था से पटरी नहीं बैठा पा रहे कई उद्योग–धंधे बंद हो गए। फैक्टरियों में ताला पड़ गया और बड़ी संख्या में लोग बेरोजगार हो गए। इतना ही नहीं, घाटा देने वाले सरकारी उपक्रमों में भी खर्च में कटौती का खामियाजा उसके कर्मचारियों को भुगतना पड़ा। नई अर्थव्यवस्था ने रोजगार के मौके तो पैदा किए, मगर बड़ी संख्या में उन बेरोजगारों की फौज भी तैयार होने लगी जो इस बदले हुए परिवेश में दौड़ लगाने को तैयार नहीं थे। पवन कुमार वर्मा के शब्दों में–

''उम्मीद और आशावाद के इस आम माहौल का सबसे दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह था कि इसके कारण भारतीय अर्थव्यवस्था की असली हालत से जुड़े हुए कुछ असुविधाजनक परिदृश्य पृष्ठभूमि में चले गए थे। अच्छी तनख्वाहों वाली नौकरियों तथा 'यात्राएं करने व छुट्टियां मनाने की संभावनाओं से मोहित लोगों के लिए उन कम से कम 25 करोड़ देशवासियों को भूल जाना स्वाभाविक ही था जो अपनी रातें उस समय भी भूखे पेट ही गुजार रहे थे।''

(द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास–पवन कुमार वर्मा)

इस तरह हम समझ सकते हैं कि उदारीकरण के बाद भारतीय समाज में आए बड़े परिवर्तन और उथल–पुथल इसी शहरी जीवन के रंगमंच पर घटित हुए। फीचर चाहे सिर्फ शहरी हलचलों या वहां के जीवन में आ रहे बदलावों को इंगित भर करने वाले हों या उनका बाकायदा विश्लेषण करने वाले, इस पूरी पृष्ठभूमि को समझे बगैर शहरी जीवन पर अच्छा फीचर लिख पाना संभव नहीं होगा। आगे हम यह देखेंगे कि शहरी जीवन के वह कौन से प्रमुख क्षेत्र हैं, जिन पर फीचर लिखा जा सकता है।

15.5 शहरी वर्ग के संबंध में लेखन के विभिन्न क्षेत्र

अब हम शहरी वर्ग पर लिखे जाने वाले फीचर के विषय क्षेत्रों पर चर्चा करेंगे। यहां हम मुख्य रूप से शहरी जीवन के विभिन्न पहलुओं को तीन शीर्षकों के अंतर्गत समेट सकते हैं। इन शीर्षकों के दायरे में हम मौजूदा समय में शहरी जीवन को लेकर लिखे जा रहे लगभग हर प्रकार के फीचर को समेट सकते हैं। आइए, क्रमवार इन पर विचार करते हैं।

15.5.1 लोग और लोकाचार

फीचर लेखन के लिहाज से शहरी जीवन सर्वाधिक लोकप्रिय क्षेत्र है। अखबारों में 'पेज थ्री' की संकल्पना में भी इसका योगदान है। राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर की पत्रकारिता ने बहुत तेजी से उस वर्ग को फोकस में लिया है, जो उदारीकरण का समर्थन करने वाले जीवन मूल्यों को अपनाने की वकालत करता है। उन लोगों और उनकी जीवन–शैली से अवगत कराने वाले फीचर इन दिनों खूब लिखे जा रहे हैं। बहुत से फीचर लेखक इस जीवन–शैली को आलोचनात्मक नजरिए से भी देखते हैं, पर कुल मिलाकर यह क्षेत्र फीचर लेखन का केन्द्र बिंदु है, इसमें कोई दो राय नहीं महानगरों में पार्टियों का बढ़ता चलन, तेजी से तैयार होते मनोरंजन पार्क, फास्ट फूड सेंटर और मल्टीप्लैक्स, मनोरंजन के नए साधन मित्रता और प्रेम के बदलते मायने, फैशन आदि इसी श्रेणी में आते हैं। इस तरह की जीवन–शैली से अवगत कराता 'इंडिया टुडे' में प्रकाशित एक फीचर का उदाहरण देखें –

''कोई उन्हें भले ही न जानता हो, पर वे लोग परिचित से लगे। वे विज्ञापनों में दिखते लोग हो सकते हैं, पर मॉडल नहीं थे। वे अखबारों के तीसरे पन्ने पर प्रकाशित होने वाले लोगों जैसे भी दिखे। यह बात दीगर है कि वे वहां छपते नहीं हैं। यह कबीला अनाम फैशन परस्तों का था जिनकी आबादी तेजी से बढ़ रही है।''

(फैशनपरस्त कुनबा (कणिका गहलोत, 'इंडिया टुडे', 5 जनवरी 2004)

15.5.2 शहरी जीवन में संघर्ष

जैसा कि हमने पहले भी कहा था, सारी चकाचौंध के बावजूद शहरी जीवन काफी संघर्ष दिक्कतों से भरा हुआ है। एक अच्छे फीचर लेखक को इस क्षेत्र में बिखरे तमाम मुद्दों से पहचान करके उन पर लिखना चाहिए। दरअसल शहरी जीवन में संघर्ष की अपार संभावनाएं हैं। शहरों में रहने वाले परिवारों का विघटन, अकेलापन तनाव और अवसाद का शिकार होते लोग, असुरक्षा की बढ़ती भावना, महिलाओं और लड़कियों के खिलाफ होने वाले यौन अपराध, स्लम में रहने वाले लोगों का जीवन, शहर की घनी आबादी वाले इलाकों में ताजे पानी और हवा के लिए तरसते निम्न वर्गीय लोगों का जीवन – यह सब कुछ इस व्यापक क्षेत्र का हिस्सा है।

इंडिया टुडे के 30 जुलाई 2003 की आवरण कथा 'कैसे रहते हैं भारतीय परिवार में' भारतीय जनगणना परिवार सर्वे की मदद से कई दिलचस्प आंकडे प्रस्तुत किए गए हैं। इनसे हमें पता चलता है कि देश की सिर्फ 52 फीसदी जनता ऐसे मकानों में रहती है जिनकी दीवारें और छत पक्की है। सिर्फ 56 फीसदी घरों में बिजली है और 56 फीसदी को ही पानी उपलब्ध है। इस कवर स्टोरी से हमें पता चलता है कि लगभग हरेक दूसरे भारतीय के लिए घर का मतलब है, केवल एक कमरा। इस घर की अवधारणा में रसोई, गुसलखाना और शौचालय शामिल नहीं है। अभी भी 62 फीसदी परिवारों को अपने घर पर पीने का पानी नहीं मिल पाता। 12 फीसदी भारतीय परिवार अभी भी खुले में खाना बनाते हैं। 32 प्रतिशत भारतीय परिवारों के पास टी.वी है और इससे थोड़ा अधिक अनुपात में रेडियो वाले परिवार हैं।

15.5.3 शहरों की धरोहर

शहरी जीवन की धरोहर और वहां की संस्कृति को पहचानना सचमुच बड़ा मुश्किल काम है। इसके लिए हमें रोजमर्रा के शहरी जीवन से अपना जीवंत संपर्क स्थापित

करना होगा। अपने शहर के अतीत को समझना होगा। वास्तविकता यह है कि शहरी जीवन के इस क्षेत्र में काम भी बहुत कम हुआ है। अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा इस क्षेत्र में फीचर लेखक से ज्यादा श्रम की अपेक्षा रहती है। थोड़ा विस्तार में जाकर देखें तो हर शहर की अपनी एक खास किस्म की संस्कृति होती है। यह संस्कृति वहां की भाषा, स्थापत्य, परंपरागत कलाओं, खान–पान, लोगों के तौर–तरीके से पहचानी जाती है। लखनऊ, इलाहाबाद, वाराणसी, जयपुर, भोपाल और ग्वालियर जैसे शहरों ने भी अपनी इसी खास संस्कृति के चलते पहचान बनाई है। इस परंपरागत शहरी संस्कृति का धीरे–धीरे खत्म होना, संरक्षण की कोशिशें, उनका इतिहास, शहरी लोक जीवन की धड़कनें, परेशानियों में भी लोगों के जीने का हौसला, शहरी जीवन की विविधता आदि भी शहरी जीवन पर लिखे जाने वाले फीचर का ही विषय है। एक उदाहरण देखें –

''इलाहाबाद के कनॉट प्लेस यानी सिविल लाइंस में महत्वपूर्ण प्रकाशन संस्थान लोक भारती के पड़ोस में बसा कॉफी हाउस आजादी के बाद सामाजिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य से लेकर आज तक के बदलते हुए राजनीतिक मूल्यों से प्रभावित जनजीवन के आदर्शों का मूक–मुखर साक्षी दर्शक रहा है। यह कहवाघर सहज ही मन में घर कर लेता है। संस्कारधानी इलाहाबाद के हृदय प्रदेश में स्थित यह जगह केवल दिलों में ही जगह नहीं बनाती, वरन राजनीतिक संदर्भ में भी बैरोमीटर का काम करती है।''

(आज भी यहां धड़कता है दिल (यश मालवीय, वनिता, अप्रैल 2001)

15.6 विषय पर लेखन के प्रकार

हमने यह देखा कि शहरी जीवन पर लेखन को मुख्य तौर पर कितने क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है। इन सभी क्षेत्रों में हम फीचर लेखन के तमाम विषय तलाश सकते हैं, उन पर विशेषज्ञता हासिल कर सकते हैं और अच्छे फीचर लिख सकते हैं। आगे हम इसी पर थोड़ा और विस्तार से विचार करेंगे और यह देखेंगे कि शहरी जीवन पर कितने प्रकार के फीचर लिखे जा सकते हैं।

15.6.1 बदलता शहरी समाज

जैसा कि हमने पहले कहा था, बदलते शहरी समाज पर मुख्यधारा की भारतीय पत्रकारिता की खास निगाह है। इसकी एक बड़ी वजह उपभोक्तावाद का प्रसार और लोगों के रहन–सहन में तेजी से आया परिवर्तन है। हम इसी पृष्ठभूमि का इस्तेमाल महज सूचनात्मक या सपाट किस्म का आलेख देने की बजाय रचनात्मक ढंग से भी कर सकते हैं। हम बदलते शहरी समाज की धड़कनों को पकड़ सकें तो कई दिलचस्प विषय सामने आयेंगे। इसके लिए भारतीय समाज की बदली मानसिकता को पकड़ना जरूरी है।

'इंडिया टुडे' के नवंबर 2003 के अंक की कवर स्टोरी 'मनोरंजन का नया चेहरा' में टेक्नोलॉजी के माध्यम से मनोरंजन के नए उभार की चर्चा है। तेजी से खुलते मल्टीप्लेक्स में अब एक साथ कई फिल्में दिखाई जाती हैं और दर्शकों के पास चुनने को विकल्प होते हैं। मोहल्लों में साइबर कैफे खुल गए हैं, जहां लोग घंटों अपने परिचितों या अजनबियों से चैटिंग करते हैं। एफ.एम रेडियो बेहतर ध्वनि स्तर और दिलचस्प प्रस्तुति के जरिए लोगों के दिलों–दिमाग पर छा गया है। वहीं मोबाइल पर एसएमएस ने भी एक नयी संस्कृति विकसित की है। इसी अंक में एक्जीक्यूटिव चारू

धवन कहती हैं, 'एस.एम.एस' के जरिए वह बात खुलकर कह सकते हैं, जिसे शायद बोलने से आप हिचकिचाएं। मोबाइल अब सिर्फ बातचीत का नहीं, बल्कि मनोरंजन का भी एक साधन बन गया है।

इस उदाहरण से हमें एक ऐसा प्रस्थान बिंदु मिलता है, जिसके आधार पर आगे कई तरह के विषय चुने जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, भारतीय शहरों में रोजमर्रा के जीवन में आए परिवर्तन, लोगों की सोच, फैशन में नित नए बदलावों के पीछे की मानसिकता, लोगों का खान–पान, उनकी समाजिकता आदि तमाम बिंदु हैं, जिन्हें फीचर का विषय बनाया जा सकता है।

15.6.2 शहरी मध्यवर्ग

शहरी मध्यवर्ग ने बीते डेढ़–दो दशकों से उदारीकरण की ताजा हवा में सांसें लेना शुरू किया है, लेकिन उसकी मुश्किलें कम नहीं हुई हैं। मध्यवर्गीय परिवारों में जीवन जीने की जद्दोजहद लगातार बनी हुई है। कभी देश भर में बेहद लोकप्रिय टेलीविजन सीरियल 'हम लोग' जिस मध्यवर्गीय परिवार के संघर्ष की दास्तान बयान कर रहा था, माहौल भले बदल गया हो मगर मध्यवर्ग का संघर्ष वही है। भारतीय मध्यवर्ग की मानसिकता में आई इस फांक को 'द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास' में पवन कुमार वर्मा और स्पष्ट करते हुए लिखते हैं –

''भले ही भारतीय उपभोक्ता जेब से पैसा निकालने से पहले सौ बार सोचता हो, वह उस सनसनी का मजा लेने के लिए भी व्याकुल है जो उसे जीवन में पहले कभी नहीं मिली। उसे वे दिन याद हैं जब उसे विदेश यात्रा करने वाले रिश्तेदारों से लेवी जींस या केमे लाने का अनुरोध करना पड़ता था, या जब वह तस्करी का माल बेचने वाले दुकानदार से हेड एंड शोल्डर लोशन और बैंकाक में बनी लेकॉस्ट टी–शर्टस के लिए मोलभाव करता था। अब वह निश्चित रूप से अपनी पसंद चलाने और अपने आग्रहों को मनवाने के मूड में है।''

(द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास–पवन कुमार वर्मा)

इस तरह हम भारतीय मध्यवर्गीय जीवन के तमाम आयामों को फीचर के जरिए सामने ला सकते हैं। इसके लिए यह जरूरी है कि हमने अपने आसपास के परिवेश का सूक्ष्म निरीक्षण करने के साथ–साथ ही उसका गहराई से विश्लेषण भी किया हो। इस तरह हम भारतीय मध्यवर्ग की दिक्कतों, शहरी युवाओं में बेरोजगारी, शहर की कामकाजी महिलाओं की परेशानियों को फीचर का विषय बना सकते हैं।

15.6.3 शहरों में बढ़ते अपराध और असुरक्षा

रोजी–रोटी की तलाश में महानगरों की ओर लाखों लोगों का पलायन आज भी जारी है। उदारीकरण की लहर ने शहरों का पूरा परिवेश ही बदल दिया है। विभिन्न वर्गों के बीच सामाजिक असमानता की खाई और चौड़ी हुई है। शहरों में होने वाले अपराधों की एक बड़ी यह वजह सामाजिक असमानता भी है। साथ ही जिस तरह से उपभोक्तावाद ने लोगों की भौतिक महत्वाकांक्षाओं को भी हवा दी है, उसके चलते ऐसे लोग भी अपराधों में लिप्त हो रहे हैं, जिनकी कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है। इस सबकी वजह से आम शहरी का जीवन तेजी से असुरक्षित होता जा रहा है। फीचर में हम इस मुद्दे से जुड़े तमाम पहलुओं को विषय बना सकते हैं। जाने माने राजनीतिक

चिंतक सुनील खिलनानी अपनी किताब 'द आइडिया ऑफ इंडिया' में इसी अजनबी से लगने वाले शहरों के बारे में लिखते हैं –

''इन नए शहरों की सड़कें प्रायः नामहीन हैं जिससे उन पर चलने वालों को सांकेतिक किस्म की ऐतिहासिक स्मृति से ही छुटकारा मिल जाता है। यहां शहर की 'अवधारणात्मक अनुभूति कमजोर है। नागरिक सुविधाओं की बड़ी कमी है और शहरी प्रारूप लापता है। पुलिस का प्रभावी बंदोबस्त भी नहीं है। महानगरों के मुकाबले ये शहर छोटे पैमाने के हैं इसलिए उनमें परस्पर और परिचित नागरिकों के बीच अनाम और अवैयक्तिक रिश्तों को प्रोत्साहित करने की क्षमता भी कम है। इन शहरों ने ऐसे नए और विशेष प्रकार के सामाजिक संबंधों को जन्म दिया है जो न आधुनिक हैं न पारंपरिक।''

(द आइडिया ऑफ इंडिया–सुनील खिलनानी)

15.6.4 शहरी गरीब तबका और मलिन बस्तियां

शहरी जीवन खूबसूरत तस्वीर का यह एक तकलीफदेह और लगभग अनिवार्य पहलू है जो बताता है कि इस सारी चकाचौंध के पीछे कहीं अंधेरा भी मौजूद है। लाखों की संख्या में शहरों में आजीविका तलाश करने के लिए आने वाले जीने की न्यूनतम शर्तो पर शहरों में दिन बिता रहे हैं। वे रात–दिन कड़ी मेहनत करते हैं, इसके बावजूद शहर उन्हें कभी नहीं अपनाता। उन्हें पीने के पानी, शौचालय और घर के आसपास साफ–सफाई जैसी बुनियादी सुविधाएं भी नहीं मिलतीं। इन्हें भी फीचर का विषय बनाया जा सकता है। 'आउटलुक' में इसी विषय पर प्रकाशित फीचर को हम यहां बतौर उदाहरण देख सकते हैं –

''सत्तर वर्षीय श्यामलाल की जर्जर बूढ़ी काया थमने का नाम नहीं ले रही है। रोटी की लड़ाई ने श्यामलाल को उत्तर प्रदेश के बदायूं शहर से खींचकर दिल्ली में ला पटका है। यहां रिक्शा चलाते हुए टिकिया की तरह घिस चुका श्यामलाल 20 वर्षों में अपना रिक्शा भी नहीं खरीद पाया है। उसे हर रोज रिक्शा मालिक को 20 रुपये देने हैं। खाने–पीने के बाद उसके बटुए में रोजाना बमुश्किल 50 रुपये बचते हैं। फिर श्यामलाल कहता है, 'चाहे जितना दुख झेलना पड़े, पर चार–पांच लोगों का पालन इसी कमाई से कर रहा हूं। जब तक शरीर में ताकत है, रिक्शा चलाना बंद नहीं करूंगा।' वह यमुना पार लक्ष्मीनगर में एक ढाबे के बाहर प्लास्टिक की बोरियां बिछा कर सोता है।''

आसमान का आशियाना (आउटलुक, 18 अगस्त 2003)

15.6.5 शहरी कामकाजी जीवन

शहरी वर्ग के लिए लिखे जाने वाले फीचर का यह एक अहम हिस्सा है। शहरी कामकाजी जीवन दरअसल पहले से फीचर का विषय बनता रहा है। यह सिर्फ बदलावों की चकाचौंध को नहीं देखता, बल्कि उसका तटस्थ और तथ्यपरक मूल्यांकन करते हुए उन बिंदुओं का विश्लेषण करता है, जो एक कामकाजी शहरी के लिए काम के साबित हो सकते हैं। रोजगार और व्यवसाय के नए अवसर, कार्यालयों में बदलती कार्य संस्कृति, प्रबंधन के सरल सूत्र, अपने मातहतों या साथियों के साथ संबंधों के संतुलन पर लिखे जाने वाले फीचर तो इसका हिस्सा हैं ही, इसके अलावा भूमंडलीकरण की हर पल बदलती तस्वीर से तालमेल बिठाने के नुस्खे भी इसमें

शामिल हैं। ऐसे फीचर जितने ही सूचनापरक और जानकारी से भरे हों, पाठक के लिए उतने ही दिलचस्प और काम के साबित होंगे।

उदाहरण के तौर पर, 'इंडिया टुडे' अपनी 21 फरवरी 2001 की आवरण कथा 'हजारों हाथों को काम देते नए हुनर' में कॉल सेंटर, मेडिकल ट्रांसक्रिप्शन, वेब डिजाइनिंग और मीडिया कन्वर्जेंस जैसे नए कैरियरों के बारे में जानकारी देता है। इस आलेख के मुताबिक, 'इस देश को आईटी आधारित सेवाओं में बड़ा खिलाड़ी बनाने वाले कई कारक हैं भारतीय लोग अंग्रेजी के अच्छे जानकार माने जाते हैं, अमेरिकी मानक समय और भारतीय मानक समय के बीच 12 घंटे का अंतर है। इसमें इंदौर में सेलफोन के जरिए चाय बेचने वाले राकेश भालेराव, हैदराबाद में कंप्यूटर से आभूषण के डिजाइन तैयार करने वाले सुनार मुल्का वेंकट राजु, केरल में 12 हजार रुपये की ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम मशीन खरीदने वाले मछुआरे थॉमस दासन और इंटरनेट से फलों की बिक्री करने वाले होशियारपुर के खुशवंत सिंह अहलूवालिया पर आलेख हैं, जो यह बताते हैं कि कैसे भारतीयों ने परंपरागत उद्योगों के साथ नई टेक्नोलॉजी का तालमेल बैठाया है।

15.6.6 शहरी नियोजन और नागरिकता

शहरी जीवन के अपने कुछ सकारात्मक मूल्य हैं। किसी शहर का विकास भी कुछ मूल्यों और कुछ व्यवस्थाओं को ध्यान में रखते हुए किए नियोजित तरीके से होता है। आमतौर पर एक सुरक्षित, साफ–सुथरे, परस्पर सहयोग से भरे और प्रकृति के सान्निध्य में रहने वाले शहरी जीवन को ही आदर्श माना जाता है। लोगों से अपेक्षा की जाती है कि वे एक बेहतर नागरिक के रूप में सामने आएंगे और शहरी जीवन को बेहतर बनाने में मदद करेंगे। इन विषयों पर फीचर लिखे जा सकते हैं। बेहतर नागरिक बनने और एक नियोजित शहर की संकल्पना को सामने लाएं और इनके आलोक में अपने आसपास के परिवेश का आलोचनात्मक विश्लेषण करें। यहां हम जो उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, वह अंग्रजी के लेखक पंकज मिश्र की भारत के छोटे शहरों और कस्बों का सबसे प्रामाणिक और जीवंत चित्र खींचने वाली किताब 'बटर चिकन इन लुधियाना' से लिया गया है। यह भले ही किसी समाचारपत्र में प्रकाशित फीचर का हिस्सा न हो, पर मर्म को समझने में खूब मदद करता है –

''जिस घर में मैं ठहरा था, वह एक बड़ी मध्यवर्गीय कॉलोनी में स्थित था। उल्टे–सीधे तरीके के बने हुए ऐसे घरों के हजारों झुंड पूरे देश के शहरों में मिल जाएंगे। कालोनी के अंदर की सड़कों पर खडंजा तक नहीं था। निश्चित रूप से बारिश के दिनों में उनका इस्तेमाल नामुमकिन हो जाता होगा। जगह–जगह घास और खरपतवार उगी हुई थी। हर घर के पिछवाड़े कूड़े के बड़े–बड़े ढ़ेर जमा थे। रिसते हुए पाइपों से पानी की आवाज साफ सुनाई दे रही थी। यह पानी एक छोटे से नाले में गिर रहा था जिसे बड़ी चालाकी से किसी ने अपने बाग की ओर मोड़ दिया था।

नागरिक सुविधाओं की इस बदतर हालत के पीछे धन का अभाव तो किसी कीमत पर नहीं था। उल्टे, अगर कोई कसूरवार था तो वह था अचानक हुआ धन का बाहुल्य। नागरिक उत्तरदायित्व के बोध को सघन करने के बजाय धन की इस प्रचुरता ने लाभार्थियों में एक तरह का आक्रामक व्यक्तिवाद प्रोत्साहित किया था। रिश्वत खिलाने और हड़प सकने की क्षमता के दम पर अगर पानी, बिजली और टेलीफोन के गैर–कानूनी कनेक्शन लिए जा सकते थे तो कॉलोनियों की परवाह करने की क्या

जरूरत थी। कॉलोनी के घर किले जैसे थे और हर व्यक्ति अपने–अपने किले की सरदारी तक ही सीमित रहना चहता था। भले ही कूड़े के ढ़ेर और ऊंचे क्यों न होते चले जाएं, या जंगली घास घर–घर की चौहद्दी से भी ऊंची क्यों न हो जाए और बारिश में अपने आराम के लिए खास तौर से तैयार कराई गई मारुति–1000 के पहिए गीली मिट्टी में क्यों न धंस जाएं।''

(बटर चिकन इन लुधियाना–पंकज मिश्र)

15.7 शहरी जीवन पर लेखन के लिए आवश्यक योग्यता

अब हम इस प्रश्न पर विचार कर सकते हैं कि शहरी जीवन पर एक अच्छा फीचर लिखे जाने वाले को किन योग्यताओं का विकास करना चाहिए। जैसा कि पहले दिए गए उदाहरणों से आपको स्पष्ट हो गया होगा, शहरी जीवन पर लिखे जाने के लिए हमें सामाजिक स्तर पर होने वाले परिवर्तनों की समझ के अलावा अपने आसपास का सूक्ष्म निरीक्षण करने वाला भी होना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि हम शहरी जीवन की हलचलों पर नजर रखने के साथ–साथ उनका गंभीरता और गहराई से विश्लेषण भी कर सकें। इस इकाई में हम कवि–लेखक यश मालवीय के एक फीचर के कुछ हिस्से बतौर उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। इसकी खूबी यह है कि यह सिर्फ एक कॉफी हाउस के बहाने पूरे शहर की सांस्कृतिक हलचलों को आपके सामने रखता है –

''इलाहाबाद के कनॉट प्लेस यानी सिविल लाइंस में महत्वपूर्ण प्रकाशन संस्थान लोक भारती के पड़ोस में बसा कॉफी हाउस आजादी के बाद सामाजिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य से लेकर आज तक के बदलते हुए राजनीतिक मूल्यों से प्रभावित जनजीवन के आदशों का मूक–मुखर साक्षी दर्शक रहा है। यह कहवाघर सहज ही मन में घर कर लेता है। संस्कारधानी इलाहाबाद के ह्रदय प्रदेश में स्थित यह जगह केवल दिलों में ही जगह नहीं बनाती, वरन राजनीतिक संदर्भ में भी बैरोमीटर का काम करती है।

छात्र संघ का चुनाव हो, बार एसोसिएशन का कोई मामला हो, एजी ऑफिस, हाईकोर्ट, बोर्ड ऑफ रेवेन्यू आदि कार्यालयों की ट्रेड यूनियन गतिविधियों का संदर्भ हो, निष्कर्ष एस्प्रेसो कॉफी की झागदार सनसनाहट के बीच अवतरित होते हैं। गरमागरम बहसों के बीच लोग उफनते दिखते हैं और धीरे–धीरे कॉफी ठंडी होती चली जाती है, प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह और चंद्रशेखर ने भी यहां बैठक की है। लोहिया के बाद छोटे लोहिया कहे जाने वाले जनेश्वर मिश्र पर भी यहां की कॉफी हाउस का जादू चल चुका है। विश्वविद्यालय के रीडर–प्रोफेसर हों या वकील भाइयों की बिरादरी, यहीं से कई बार ऊर्जा ग्रहण करते हैं। वकील भाई तो मुकदमों का भी सौदा कर लेते हैं।

कॉफी हाउस का अपना एक भव्य अतीत है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास की तरह कॉफी हाउस का भी अपना इतिहास रहा है, बल्कि उससे हिन्दी साहित्य को समझने में भी काफी कुछ मदद मिल सकती है। काफी हाउस का वर्तमान भी वैसे कम गरिमामय नहीं है, यह बात और है कि वह भी इन दिन थोड़ी–बहुत उत्तर आधुनिकता की चपेट में है।

किस लेखक की किताब की भूमिका किसने लिखी, किस कहानीकार की किताब का लोकार्पण किस मंत्री ने किया, कौन–सा लेखक सरकारी फेलोशिप के चक्कर में है,

कौन–सा लेखक साहित्य अकादमी पुरस्कार से इस बार चूक गया, ये सारे विषय संपूर्ण केंद्रीयता के साथ चर्चा में लाए जाते हैं।

कॉफी हाउस में जाकर यह अफसोस बार–बार होता है कि कॉफी पिलाने वाले कम होते जा रहे हैं और कॉफी पीने वालों की संख्या में दिन–दूनी रात चौगुनी वृद्धि होती जा रही है। आज भी कॉफी हाउस में जीवन और जगत की धड़कनें सुनी जा सकती हैं, हालांकि इन धड़कनों में अतीत की कराह भी शामिल होती है.....''

आज भी यहाँ धड़कता है दिल – यश मालवीय (वनिता, अप्रैल 2001)

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) उदारीकरण के बाद भारतीय शहरों में क्या परिवर्तन देखने को मिले हैं और लोगों के रहन–सहन में क्या बदलाव आया है? उदाहरण सहित विवेचना करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) रोजी–रोटी की तलाश में बड़ी संख्या में महानगरों की ओर रुख करने वाले श्रमिकों की शहरों में रिहाइश और उनके रोजमर्रा के संघर्ष पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) आप जिस शहर में रहते हैं, उसका बेहतर नियोजन किस तरह हो सकता है? कौन–से बिंदुओं पर नागरिकों का सहयोग अपेक्षित है? अपने शहर के लोगों से बातचीत के आधार पर एक संक्षिप्त फीचर लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

15.8 विषय का चयन

अब तक आपको यह अंदाजा लग गया होगा कि शहरी वर्ग के लिए फीचर लेखन का क्षेत्र खासा विस्तृत है। एक लेखक अपने अध्ययन, विश्लेषण और आसपास के माहौल के सतर्क निरीक्षण से इन्हीं क्षेत्रों में कई नए आयाम तलाश सकता है। शहरी जीवन से संबंधित फीचर के लिए विषय चुनने के दौरान हमें कुछ बुनियादी बातों का भी खयाल रखना चाहिए। आगे हम उन्हीं पर विचार करेंगे।

15.8.1 रुचि और विशेषज्ञता

शहरी जीवन से जुड़ा कोई भी विषय चुनते वक्त अपनी रुचि का खास ध्यान रखें। बिना दिलचस्पी के आप उस विषय पर बेहतर काम नहीं कर सकते। शहरी जीवन पर लेखन का क्षेत्र काफी व्यापक होने की वजह से फीचर लेखक के लिए शहरी जीवन के किसी खास क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल करने की काफी संभावनाएं रही हैं। लिहाजा इस तरह तैयारी करनी चाहिए कि आप शहरी जीवन से जुड़े किसी खास क्षेत्र में विशेषज्ञता के जरिए अपनी पहचान बना सकें। इसके लिए यह जरूरी है कि आप दिलचस्पी वाले क्षेत्र के बारे में अधिक से अधिक जानकारी हासिल करें और उससे अपना जीवंत संपर्क बनाएं।

15.8.2 लेखन का उद्देश्य और प्रासंगिकता

समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में शहरी जीवन पर फीचर लिखते वक्त हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि वह समयानुकूल और प्रासंगिक हो। इसका ख्याल रखे बिना हमारा फीचर असरदार नहीं बन पाएगा। यह भी ख्याल रखना होगा कि कौन से विषय समय के हिसाब से प्रासंगिक हैं। शहरी जीवन की रफ्तार तेज होती है और लोगों की मनोवृति और रहन–सहन में तेजी से बदलाव आते हैं। यदि हमने इसे ध्यान में रखते हुए विषय का चुनाव नहीं किया तो हमारा लेखन भी उबाऊ हो जाएगा। साथ हमें अपने लेखन के उद्देश्य को भी स्पष्ट करते हुए चलना होगा। अपने स्तर पर यह पहले ही तय कर लेना होगा कि फीचर में हम शहरी संस्कृति को सामने रखना चाह रहे हैं, बढ़ते अपराधों पर फोकस करना चाहते हैं या शहरों में बसे लोगों की तकलीफों को बयान करना चाहते हैं।

15.8.3 प्रकाशन की प्रकृति

फीचर लिखने के दौरान प्रकाशन की प्रकृति का भी ध्यान रखना होगा। बहुत से अखबार शहरी जीवन के बारे में फीचर छापते वक्त ब्रिटिश या अमेरिकी टेब्लायड अखबारों या पेज थ्री की शैली का अनुसरण करते हैं, जिसमें शहरी जीवन के चमक–दमक से भरे पहलू और नामी–गिरामी हस्तियों की चर्चा होती है या फिर एक नए तौर–तरीकों का जिक्र होता है जो शहरी जीवन में एक नए लोकाचार के रूप में स्थापित होते जा रहे हैं। वहीं बहुत–सी पत्रिकाएँ और अखबार ऐसे भी हैं जो शहरी जीवन की दिक्कतों को तर्कसंगत ढंग से सामने रखते हैं। यहां दोनों किस्म के उदाहरण देखने से बात खुद–ब–खुद स्पष्ट हो जाएगी–

''गोरखपुर में जन्मदिन हो या शादी की सालगिरह या फिर बेटे या बिटिया की कोई कामयाबी, थीम पर फिल्म बनाकर पार्टी में दिखाना नया शगल बन गया है। जोनाफोटोज के नईम अहमद कहते हैं, 'हमें महीने में ऐसी छह–सात फिल्में बनाने के

प्रस्ताव आसानी से मिल रहे हैं। दरअसल छोटी वीडियो फिल्में मझोले शहर के उन 'प्रौढ़ होते युवाओं' के लिए आकर्षण का केन्द्र हैं जो खुद को बड़े परदे पर–पांच मिनट के लिए ही सही–देखने के ख्वाहिशमंद हैं। कोई दो साल पहले इस तरह की शायद सबसे पहली शुरुआत करने वाले शहर के नामी फिजीशियन डॉ. रजनीकांत श्रीवास्तव भी कहते हैं, 'शादी की 15वीं सालगिरह के मौके पर हम लोगों ने पुरानी तस्वीरों में स्लाइड शो तैयार कराया। पार्टी में आए तमाम लोग खुद को इन तस्वीरों में देखकर कितने खुश थे, इसकी कल्पना भी नहीं थी।''

बड़े परदे पर दिखने की चाह–कुमार हर्ष (इंडिया टुडे, 8 अगस्त 2005)

''देश के सबसे सुव्यवस्थित और खूबसूरत कहे जाने वाले शहर चंडीगढ़ में रोज लगभग 15 हजार प्रवासी मजदूर फुटपाथों पर रात गुजारते हैं। यहां फुटपाथों पर रात को मजदूरों के अलग–अलग समूह स्टोव पर खाना बनाते हैं, लोकगीत गाते हैं, रेडियो–टेप सुनते हैं, फिर गहरी नींद के आगोश में चले जाते हैं। सुबह पांच–छह बजे के बीच इनका दिन शुरू होता है। सेक्टरों में बने सार्वजनिक शौचालयों में निवृत्त होते हैं, नहाते हैं। स्टोव पर ही नाश्ता और पोटलियों में बांधने के लिए दोपहर का खाना तैयार किया जाता है। मजदूर अपना–अपना सामान प्लास्टिक की बड़ी–बड़ी पोटलियों या बोरियों में समेट कर या तो पेडों से बांध देते हैं या फिर फुटपाथ के बरामदों पर बने छज्जों–गैलरियों में डाल देते हैं। पेड़, छज्जे व गैलरियां इनका दिन का घर होते हैं। सेक्टर–19सी की मार्केट में एक विशाल वृक्ष है जहां चारों तरफ शक्ल देखने वाले दर्पण लगे हैं जहां ये मजदूर सुबह–सुबह तैयार होते हैं।''

आसमान का आशियाना (आउटलुक, 18 अगस्त 2003)

15.9 सामग्री का संकलन

फीचर तैयार करने से पहले उससे संबंधित सामग्री का संकलन एक अहम कार्य है। किसी भी विषय पर फीचर तैयार करने से पहले हमें आवश्यक सामग्री एकत्र करनी होती है, जिनमें आम तौर पर विषय से संबंधित आंकड़े, फोटो, लोगों के साक्षात्कार आदि को शामिल किया जाता है। आगे हम इन पर सिलसिलेवार विचार करेंगे।

15.9.1 विषय पर शोध

''इस बात पर यकीन करना मुश्किल है कि 1999 तक सेलफोन को अमीरों का खिलौना समझा जाता था। 1999 से कुछ पहले तक तो टेलीफोन भी विशेषाधिकार प्राप्त लोगों की चीजें माने जाते थे। आज करीब दो करोड़ भारतीय, जिनमें किसान और मछुआरे भी हैं सेलफोन लेकर घरों से निकलते हैं.....''

(इंडिया टुडे, 20 अगस्त 2003)

उपर्युक्त उदाहरण से यह स्पष्ट होता है कि कैसे शोधपरक जानकारी फीचर को और बेहतर बनाने में मदद करती है। फीचर तैयार करने से पहले हमें संबंधित विषय के बारे में पूरी जानकारी अवश्य हासिल कर लेनी चाहिए इसके लिए हम पुस्तकालय में उपलब्ध पत्र–पत्रिकाओं, जर्नल्स और शोध ग्रंथों की मदद ले सकते हैं। शहरी जीवन के बारे में गजेटियर से भी काफी मदद मिलती है। इसके अलावा अपने विषय से संबंधित क्षेत्रों के दौरे, वहां का भ्रमण, लोगों से बातचीत भी फीचर को प्रामाणिक बनाने में काफी मदद करते हैं।

15.9.2 तथ्यों का संकलन

फीचर लेखन की प्रक्रिया का एक अहम हिस्सा तथ्यों का संकलन है। तथ्यों की मदद से फीचर की पूरी रूपरेखा और विशिष्टता निर्धारित होती है। इसके लिए आवश्यक है कि तय किए गए विषय पर शोध और सर्वेक्षण के दौरान एकत्र तथ्यों का विश्लेषण किया जाए। इससे यह अंदाजा हो जाएगा कि कौन–सा तथ्य फीचर के लिए आवश्यक है और कौन–सा अनुपयोगी। उपयोगी तथ्यों को आकर्षक और सुनियोजित तरीके से प्रस्तुत करने पर फीचर भी पठनीय और दिलचस्प बनता है। यहां हम सुनील खिलनानी की पुस्तक 'द आइडिया ऑफ इंडिया' से एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। इससे आपको अंदाजा होगा कि सपाट से लगने वाले तथ्यों को किस तरह वैचारिक जीवंतता दी जा सकती है।

''अस्सी और नब्बे के दशक में फरीदाबाद, गाजियाबाद, मेरठ और मुजफ्फरनगर जैसे उत्तर भारतीय प्रांतीय शहर बहुत तेजी से बढ़े और लंबे–लंबे राष्ट्रीय मार्गों के किनारे देहाती क्षेत्र की गहराइयों तक अपना विस्तार करते चले गए। इससे देहात और शहर का फर्क धुंधला हो गया। इस तरह भारत में एक लाख से ज्यादा आबादी वाले दो सौ से ज्यादा शहर उभर आए। इनमें देश के नए मध्यवर्ग की रिहाइश है। इन्हें अब दूर–दराज के महानगरों को हसरत भरी निगाहों से देखने की जरूरत नहीं है। इन शहरों का रूप मुंबई और दिल्ली से अद्भुत विचारों ने निर्धारित नहीं किया है। दिल्ली और मुंबई के प्रति अगर इन शहरों में कुछ है, तो वह क्षोभ और अवज्ञा की भावनाएं हैं। यह नया भारत जी टीवी और केबल टीवी का भारत है। सरकारी दूरदर्शन की अपेक्षा अधिक संकोचहीन उपभोक्तावाद का प्रवर्तक यह भारत हिन्दी और अंग्रेजी के एक संस्करण हिंगलिश की प्रसारण–खुराक पर चलता है।''

(द आइडिया ऑफ इंडिया–सुनील खिलनानी)

15.9.3 साक्षात्कार

फीचर में साक्षात्कार का इस्तेमाल अवश्य होना चाहिए। साक्षात्कार की मदद से फीचर को प्रामाणिक और जीवंत बनाने में मदद मिलती है। इससे विषय की एकरसता और झिलमिलता भी दूर होती है। साक्षात्कार को जस का तस प्रस्तुत करने की बजाय उसे फीचर की भाषा और विन्यास का एक हिस्सा बनाकर प्रस्तुत करना चाहिए। लोगों से बातचीत के वही टुकड़े इस्तेमाल करें जिनकी आपके फीचर के साथ संगत बनती हो। उदाहरण देखें –

''उड़ीसा से चलकर तकरीबन चालीस साल पहले अदब के शहर लखनऊ पहुंचे दीपक हजरतगंज के फुटपाथ पर कब से सो रहे हैं, याद नहीं। सोने के लिए वह मच्छरदानी का इस्तेमाल करते हैं। उन्होंने पेड़ के नीचे अपने सोने की जगह बना रखी है। इन्हीं पेड़ की टहनियों से वह अपनी मच्छरदानी तान लेते हैं। दीपक बताते हैं कि बारिश में कहीं नहीं जाते। प्लास्टिक में पूरे सामान और खुद को लपेट लेते हैं। उड़िया भाषा जानने वाले दीपक पता नहीं कितने अंधड़, तूफान, शीतलहर और लू के प्रकोप झेल चुके हैं। यह पूछने पर कि अब उन्हें अपने गांव की याद आती है, वह बोल उठते हैं, 'वहां मेरा है ही कौन जिसकी याद आए, वतन की माटी वहां भी थी और यहां भी है।''

आसमान का आशियाना (आउटलुक, 18 अगस्त 2003)

15.9.4 फोटो और अन्य सामग्री

शहरी जीवन पर लिखे जाने वाले फीचर में तस्वीरों का खासा महत्व है। फीचर के साथ फोटो देने से उसका प्रभाव काफी बढ़ जाता है। भारतीय पत्रकारिता के बदले रंग–ढंग में अब प्रस्तुति पर खास जोर दिया जा रहा है। संपादक भी अब विषय वस्तु को ग्राह्य और आकर्षक बनाने के लिए तस्वीरों को महत्व देते हैं। इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि तस्वीरें वही दी जाएं जो विषय के अनुकूल हों। जहां रहन–सहन पर केंद्रित तस्वीरों में ग्लैमर पर विशेष ध्यान दिया जाता है, वहीं शहरी जीवन की दिक्कतों को सामने लाने वाले फीचर में ऐसी तस्वीरें होनी चाहिए जो विषय को प्रामाणिक बनाती हों।

15.10 सामग्री का संयोजन और संपादन

अब इस इकाई के अंतिम हिस्से में हम इस बात पर विचार करेंगे कि फीचर लिखते समय किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए। साथ ही जिस विषय या समस्या को हम फीचर के माध्यम से रखना चाहते हैं, उसकी प्रस्तुति को कैसे दिलचस्प बनाएं। यानी फीचर की भाषा किस तरह की हो, शुरुआत, मध्य और अंत कैसा हो। आइए देखें कि फीचर को बेहतर स्वरूप कैसे दिया जा सकता है।

15.10.1 आरंभ

फीचर की शुरुआत दिलचस्प होनी चाहिए। जब पत्र–पत्रिकाओं की संख्या में तेजी से इजाफा हो रहा हो और उनमें फीचर भी प्राथमिकता से छप रहे हों तो लेखक को पठनीयता का खास ध्यान रखना चाहिए। फीचर की शुरुआत हम किसी प्रसंग, जीवंत उदाहरण या साक्षात्कार से कर सकते हैं। यह तरीका पाठकों का ध्यान खींचता है और फिर हम उसे मूल विषय या समस्या की ओर ले जाते हैं। यदि हम आरंभ में ही समस्या पर चर्चा आरंभ कर देंगे तो फीचर सपाट और उबाऊ हो जाएगा। फीचर की उत्कृष्ट शुरुआत का एक उदाहरण देखें –

''पटना और गया के बीच नौ पीजी यानी पटना–गया पैसेंजर ट्रेन चलती हैं। हड़्डी के ढांचे पर बुरी तरह ऐंठ कर काली चमड़ी–जर्जर देहवाला बूढ़ा जीवनदास वर्षों से इन पीजी ट्रेनों में सुबह से रात तक भिक्षाटन करता है। वह हरेक दिन तड़के 592 डाउन यानी टू पीजी में सवार होने के लिए स्टेशन भागते हुए पहुंचता है जहां से साढ़े पांच बजे उसी की तरह जर्जर अस्थिपंजर वाली यह ट्रेन पटना के लिए चलती है। जीवनदास पर इस उम्र में कोई पारिवारिक बोझ नहीं है। बस अपना पेट पालने की चिंता है परंतु पटना और गया के बीच चलने वाले इन बूढ़े लोहे के घोड़ों पर हजारों यात्रियों का असंभव बोझ है। सोलह बोगी वाली 592 डाउन में, जिसमें लगेज वैन भी शामिल है, तकरीबन सात–आठ हजार लोग हर रोज किस मर्मातक ढंग से सवारी करते हैं और इतने लोग इतनी कम जगह में खप कैसे पाते हैं, इसका अनुमान लगाने में शायद किसी माहिर कलाबाज और जादूगर को भी पसीना चुहचहा जाए। इंजन के आगे खड़े होकर यात्रा करने से लेकर बोगी के ऊपर और लगेज वैन तक में यात्रियों का यह दैनिक सफर धक्कों, पसीने और घुटन से भीगी हुई चिल्लाहटों से तमतमाया होता है। जीवन संघर्ष का यह असंभव संताप अपने ऊपर लादकर हर सुबह चल देती है 592 डाउन यानी टू पीजी। जीवनदास गहरी करूणा से कहता है, 'जनम

और मरण दोनों में अपार कष्ट होता है। यह रोज की ट्रेन यात्रा जनम से मरण तक की यात्रा है।''

जनम से मरण तक की रेल यात्रा (विकास कुमार झा, आउटलुक 18 अगस्त 2003)

15.10.2 मध्य

फीचर के मध्य भाग में हम अपने पाठकों को केंद्रीय विषय के विस्तार में ले जाते हैं। यह हिस्सा सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होता है। इसे हम पूरे आलेख की रीढ़ भी कह सकते हैं क्योंकि हम अपनी मूल संकल्पना को यहां स्थापित करते हैं। यहां विषय के विस्तार की पूरी गुंजाइश और छूट होती है इसके लिए आवश्यक है कि आंकड़ों, साक्षात्कार तथा विश्लेषण के माध्यम से बात को पूरे प्रामाणित ढंग से स्थापित किया जाए। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि फीचर की शुरुआत आपने जिस शैली में की है, उसे आगे भी बरकरार रखा जाए। उदाहरण देखें –

''पटना में 25 हजार से अधिक लोग ऐसे हैं जो फुटपाथ पर जिंदगी बिता रहे हैं। जहानाबाद का जगत प्रसाद इनमें से एक है जो स्टेशन के पास लिट्टी बनाकर बेचता है और उसके पास फुटपाथ पर सोता है। मुंह अंधेरे फुटपाथ पर ही अपने चूल्हे पर वह लिट्टी पकाने की तैयारी में जुट जाता है। उसके ज्यादातर ग्राहक स्टेशन के कुली, रिक्शावाले और भिखारी हैं। गांधी मैदान से लेकर म्यूजियम, चिड़ियाखाना के किनारे फुटपाथ से लेकर अगमकुआं शीतला मंदिर, पटना और नालंदा मेडिकल कॉलेज हॉस्पिटल से सटे फुटपाथ पर भी अपने–अपने इलाके से दरबदर लोग दुनिया जमाए हुए हैं। इनमें ठेला चलाने वाले, दैनिक मजदूरी करने वाले, सड़क पर कपड़ा बेचने वाले, मजदूरों–रिक्शा चालकों का खाना फुटपाथ पर ही तैयार करने वाले लोग ही हैं। मजलूमों के इस समुदाय ने अपनी एक अलग अर्थव्यवस्था विकसित कर ली है। बरसात और जाड़े में फुटपाथों पर जिंदगी मर्मांतक हो जाती है। लेकिन साझे की भावना ऐसी कि कड़ाके की ठंड में फुटपाथ के किनारे आग जलाकर एक चादर में दो–दो, तीन–तीन सोते हैं।''

आसमान का आशियाना (आउटलुक, 18 अगस्त 2003)

15.10.3 अंत और शीर्षक

फीचर का अंतिम हिस्सा काफी परिश्रम की मांग करता है। इसे समाप्त करने में खास तरह के कौशल की जरूरत होती है। लेखक का प्रयास होना चाहिए कि फीचर का अंत चुस्त हो और उसमें अब तक कही बात को समेटने का प्रयास हो। भले ही आप अंत में किसी समाधान की ओर इशारा करने की बजाय पाठकों के सामने ही सवाल उठाएं, मगर फीचर के अंत में किसी किस्म का बिखराव या अस्पष्टता नहीं होनी चाहिए। यदि ऐसा हुआ तो पहले कही गई बातों का पाठक पर प्रभाव नहीं पड़ेगा और फीचर बेअसर हो जाएगा। इसी तरह से, शीर्षक सपाट किस्म के नहीं होने चाहिए फीचर के शीर्षक हमेशा संक्षिप्त और आकर्षक होने चाहिए।

15.11 भाषा–शैली

शहरी वर्ग के लिए लिखे जाने वाले फीचर की भाषा–शैली विषयानुकूल होनी चाहिए। बात को दिलचस्प बनाए रखने के साथ किंचित गंभीरता का पुट रखना खासा जरूरी है। इसके बिना शहरी जीवन पर लिखा गया फीचर बहुत प्रभावी नहीं हो सकेगा। यह भी ध्यान रखना होगा कि हम जिस विषय पर लिख रहे हैं, उसकी समुचित शब्दावली से परिचित हैं या नहीं। इनके अभाव में कई बार हम अपनी बात को दमदार तरीके से प्रस्तुत नहीं कर पाते हैं। फीचर की भाषा सरल हो, उसमें प्रवाह और गति हो अपने पाठकों को वर्णन और विश्लेषण के जरिए बांधे रह सके। यहां हम मुंबई में आई आपदा पर जानी–मानी लेखिका पद्मा सचदेव के फीचर का एक अंश प्रस्तुत कर रहे हैं, जो यह बताता है कि अखबारों और टेलीविजन में कई दिनों तक छाई यह त्रासदी जब एक लेखक की निगाह से गुजरती है, तो कैसे उसमें तमाम अनछुए मानवीय पहलू भी उजागर होने लगते हैं –

''25 जुलाई मंगलवार को मुंबई की बरसात, जिसका कोई भरोसा नहीं, झमाझम बरस रही थी। अचानक आसमान संवला गया है। निचली जगहों पर पानी भरने लगा। जब तक फोन चलते रहे, लोग अपनों का पता करते रहे। बच्चों के स्कूल, फोन की घंटी और स्कूल में दुबके बच्चे, हैरान–परेशान मां–बाप। कोई–कोई बच्चा तैरकर या किसी अभिभावक के साथ घर आ गया, ज्यादातर वहीं टंगे रहे। साढ़े तीन बजे होंगे जब अंधेरे ने मुंबई को अपनी आगोश में ले लिया, निचले इलाकों में ट्रैफिक रुक गया। लोग बसों में बैठ गए। बसे ज्यादा सुरक्षित थीं। जिन्होंने मोटरों के दरवाजे बंद करके एसी में सोने का मन बनाया उनकी समाधि मोटरों में ही हो गई। दरवाजे खुले ही नहीं। उस प्रलय में कौन किसको पूछता। ये घर कमबख्त बड़ी जानलेवा वस्तु है। कहां–कहां याद नहीं आता।

ये सर्द रात, ये आवारगी, ये नींद का बोझ, हम अपने शहर में होते तो घर गए होते। अपने शहर में होने पर भी उस दिन घर जाना जैसे एक ख्वाब हो गया था। बह रहे पानी में मनुष्य, कुत्ते, मवेशी, सांप, चूहे सब इकट्ठे ही जा रहे थे उस घर में जो डूबा न था। कहते हैं, इस प्रलय में मनुष्य ने मनुष्य को पहचाना। ए बहन, उधर से नहीं, इधर से जाओ। ओ भाऊ, उधर खड्डा है, मेन होल, वहां से न जाओ। मेन होल में गिरकर कई लोग जान गवां चुके थे। मुंबई के खुले मेनहोल अजगर की तरह मुंह बाए तैयार थे। आज के जमाने में मनुष्य से ज्यादा सस्ती कोई चीज नहीं है।''

मुंबई दक्कन की शहजादी (पद्मा सचदेव, हिन्दुस्तान, 31 अगस्त 2005)

सुपरिचित लेखक सुधीर विद्यार्थी का एक फीचर भी बतौर उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है। इस फीचर में उन छोटे शहरों के प्रति गहरी चिंता जताई गई है, जो अपने इतिहास और अतीत से कटते जा रहे हैं। इन शहरों का स्मृतिविहीन होते चले जाने की पूरी पड़ताल के पीछे लेखक का विस्तृत शोध और श्रम भी झलकता है। इस तथ्यात्मकता के बिना फीचर प्रभावी नहीं बन सकता था –

''बताते हैं कि 1762 में मेवाड़ में पड़े भयंकर अकाल की वजह से बड़ी संख्या में मेवाड़ी लोग रोजी–रोटी की तलाश में रुहेलखंड आ गए। रुहेला सरदार हाफिज रहमत खां ने उन्हें रोजगार देने को पीलीभीत में दो ऐतिहासिक इमारतों जामा मस्जिद और गौरीशंकर मस्जिद के मुख्य द्वार के साथ ही अनेक दरगाहों और मकबरों का

निर्माण करवाया। दो वर्ष पीलीभीत के चारों ओर कच्ची दीवार बनवाई जिससे इस शहर को पीलीभीत कहा गया।

पीलीभीत उर्दू के प्रख्यात शायर दुर्गा सहाय 'सुरूर' जहानाबादी और हिन्दी के प्रसिद्ध कथाकार और 'चांद' जैसी पत्रिका से जुड़े चंडी प्रसाद 'हृदयेश' की भी धरती है। प्रसिद्ध लावनी गायक और रचनाकार नारायणनंद स्वामी 'अख्तर' की पैदाइश भी यहीं की है। इन इतिहास नायकों की स्मृति आज ढूंढे नहीं मिलती। नेताजी सुभाष चंद्र बोस को छद्म वेष में काबुल तक पहुंचाने वाले क्रांतिकारी भगतराम तलवार वर्षों तक पीलीभीत में रहे और सक्रिय वामपंथी राजनीति भी करते रहे, पर यहां उनका कोई स्मारक नहीं है।

पाब्लो नेरूदा ने कहा था कि स्मृतिविहीन शहर सबसे खराब जगहें होती हैं। तो क्या पीलीभीत एक स्मृतिविहीन नगर है? क्या ही अच्छा होता यदि पीलीभीत नगर के चार चौराहों पर चंडीप्रसाद 'हृदयेश', दुर्गा सहाय 'सुरूर' जहानाबादी, नारायणानंद स्वामी 'अख्तर' और भगतराम तलवार की भव्य प्रतिमाएं होतीं।

बरेली भी इतिहास और संस्कृति के प्रतीकों को सम्मान देने में आगे नहीं है। ले–देकर क्रांतिकारी दामोदार स्वरूप सेठ की स्मृति में पार्क बना। लेकिन राधेश्याम कथावाचक और प्रसिद्ध बाल साहित्यकार निरंकार देव सेवक के स्मारक हम नहीं बना पाए। बरेली कॉलेज के परिसर में क्रांतिकारी अध्यापक कुतुबशाह और छात्र जैमी ग्रीन की स्मृति में काम किया जा सकता है।

बदायूं में प्रसिद्ध शायर शकील बदायूंनी का मकान जर्जर स्थिति में है। किसे पता कि विख्यात हिन्दी कथाकार द्विजेंद्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' बदायूं के कुंवरपुर गांव के निवासी थे। यहां निर्गुण जी की याद में सड़क बन सकती है। कई बार बात चली कि खीरी लखीमपुर के किसी चौराहे पर 1942 में फांसी पाने वाले शहीद क्रांतिकारी राजनारायण मिश्र की प्रतिमा लगे, पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। शाहजहांपुर में काकोरी कांड के अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्लाह खां, ठाकुर रोशन सिंह और क्रांतिकारी प्रेम किशन खन्ना के स्मारक तो बन गए लेकिन मैनपुरी षड्यंत्र केस के पंडित देवनारायण भारतीय, भारतीय स्काउट के जनक पंडित श्रीराम वाजपेयी और हिन्दी के प्रसिद्ध एब्सर्ड नाटक लेखक भुवनेश्वर के स्मारकों का पता नहीं। वर्षों पहले किसी ने भुवनेश्वर के मोहल्ले की एक सड़क का नामकरण उनके नाम पर करवाया पर उसे कोई नहीं जानता। इस शहर ने साहित्यकार गोपाली बाबू 'चोंच', दिल शाहजहांपुरी और अचल वाजपेयी की याद के लिए भी कुछ नहीं किया।

स्मृतिविहीन जगहें अब नेरूदा की तरह किसी को कचोटती नहीं।''

सुधीर विद्यार्थी (स्मृतिविहीन शहरों का दर्द, अमर उजाला, 24 अगस्त 2004)

बोध प्रश्न –2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) फीचर लिखने के लिए विषय पर किए जाने वाले शोध के विषय में आप क्या सोचते हैं?

.....

.....

2) शहरी वर्ग के लिए लिखे जाने वाले किसी एक फीचर को सामने रखकर उसकी भाषा–शैली पर विचार किजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास

1) यदि आपको शहरों में क्लबों, मनोरंजन पार्को और रेस्तराओं में शाम बिताने वाले परिवारों पर फीचर तैयार करना है तो किन बातों का ध्यान रखेंगे? कारण सहित अपनी बात को स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) शहरों में देर रात तक काम करने वाली महिलाएं बहुत सुरक्षित नहीं हैं। इस विषय पर आपको एक फीचर तैयार करना है। इस सिलसिले में आप किस तरह से सामग्री का संकलन तथा संयोजन करेंगे? संक्षेप में बताएं।

.....

.....

.....

.....

.....

3) अपने शहर की सांस्कृतिक धरोहरों की पहचान करते हुए उनकी मौजूदा स्थिति और शहर के लोगों के इन धरोहरों के प्रति रवैये पर एक फीचर तैयार करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

15.12 सारांश

- इस इकाई में हमने देखा कि कैसे उदारीकरण के बाद शहरी जीवन में तेजी से बदलाव आया है। हमने इसके कारणों का विश्लेषण करते हुए यह भी जानने का प्रयास किया कि मौजूदा पत्रकारिता में इस संदर्भ में क्या परिवर्तन हुआ है। पत्र–पत्रिकाएं किस तरह शहरी जीवन पर खास फोकस कर रही है और इस तरह शहरी जीवन पर फीचर लेखन की क्या संभावनाएं हैं।

- हमने शहरी जीवन में आए बदलावों की सामाजिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया और शहरों पर लिखे जा रहे फीचर के विषय क्षेत्र पर भी विस्तार से उदाहरणों के साथ विमर्श किया। यह जानने की कोशिश की कि भारतीय शहरों में बदलाव की कौन–सी बयार बह रही हैं, जिसके प्रति सजग फीचर लेखक को जागरूक रहना चाहिए।

- हमने यह भी समझने का प्रयास किया कि एक सामान्य शहरी किन दिक्कतों और परेशानियों में जी रहा है। वह किस तरह की समस्याओं का सामना कर रहा है। और शहरी जीवन से जुड़े कौन से प्रमुख मुद्दे हैं, जिन पर फीचर तैयार किया जा सकता है।

- इस इकाई में हमने शहरी वर्ग के लिए लिखे जाने वाले फीचर का विषय चुनने से लेकर इन पर लिखे जाने वाले फीचर के उद्देश्य और प्रासंगिकता, सामग्री के संकलन की विधि, सामग्री के संयोजन और संपादक के तरीके तथा और भाषा शैली पर विस्तार से विचार किया। हमने समझा कि फीचर का पूरा कलेवर किस तरह से तैयार किया जा सकता है, जिससे हमें शहरी जीवन के बारे में फीचर लिखने में आसानी हो सके।

15.13 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

इस इकाई के गहन अध्ययन के पश्चात इकाई में उपलब्ध दिशा निर्देशों के आलोक में उत्तर लिखिए।

इकाई 16 ग्रामीण वर्ग के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 ग्रामीण समस्याओं पर फीचर का अभिप्राय

16.3 ग्रामीण फीचर के लिए विषय का चयन और लेखन

16.3.1 कृषि संबंधी फीचर

16.3.2 ग्रामीण विकास संबंधी फीचर

16.3.3 सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर

16.3.4 लोकजीवन संबंधी फीचर

16.4 भाषा–शैली और प्रस्तुति

16.5 सारांश

16.6 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

यह इस खण्ड की पाँचवीं और अंतिम इकाई है। इस इकाई में ग्रामीण वर्ग के लिए लेखन की आवश्यकता, प्रासंगिकता और महत्व पर विचार किया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- ग्रामीण समस्याओं से संबंधित फीचर का अभिप्राय बता सकेंगी/सकेंगे;
- ग्रामीण वर्ग के लिए फीचर लेखन के महत्व को रेखांकित कर सकेंगी/सकेंगे;
- ग्रामीण समस्याओं से संबंधित फीचर के प्रकारों का उल्लेख कर सकेंगी/सकेंगे, विषय के चयन में सावधानी बरत सकेंगी/सकेंगे;
- सामग्री संकलन और उसके संयोजन के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे; और
- ग्रामीण फीचर लेखन के कौशल का विकास कर सकेंगी/सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना

जैसा कि आप जानते हैं, हमारे देश की लगभग तीन चौथाई आबादी गांवों में रहती है। गांव के लोग मुख्य रूप से खेती करते हैं। इनमें कई लोगों के पास सैकड़ों बीघा खेत हैं तो कइयों के पास महज अपने परिवार का गुजर–बसर करने भर के लिए अन्न उपजा पाने भर के खेत हैं। इनमें कई ऐसे भी हैं जिनके पास बिल्कुल खेत नहीं है और वे बड़े किसानों के खेतों में मजदूरी करके पेट पालते हैं या उनसे बंटाई पर खेत लेकर खेती करते हैं। इनके अलावा वहां ऐसे भी अनेक लोग हैं जिनका मुख्य पेशा खेती नहीं है। इनमें बुनकर, दर्जी, बढ़ई, पुरोहित, दुकानदार आदि हैं। खेती से जुड़ी समस्याओं के साथ–साथ गांव में रहने वाले अलग–अलग जातियों और वर्गों के लोगों की अपनी अलग–अलग समस्याएं हैं। इन समस्याओं को लेकर उनके बीच

आपसी टकराव भी हैं। यह बताने की जरूरत नहीं कि गांवों में शहरों जैसी सुविधाएं नहीं हैं। अनेक गांवों में सड़क, बिजली, पानी, विद्यालय, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र जैसी मूलभूत सुविधाओं का भी अभाव है। किसानों को खाद, बीज, कीटनाशक और सिंचाई के साधनों के लिए काफी संघर्ष करना पड़ता है। अक्सर मौसम की मार से फसलें चौपट हो जाती है। जो फसलें वे उगा भी लेते हैं उनकी वाजिब कीमत नहीं मिल पाती। इस तरह खेती पर निर्भर रहने वाले हर किसान चाहे वह बड़ा हो या छोटा की आर्थिक स्थिति बदतर है। हाल के वर्षों में महाराष्ट्र और पंजाब में किसानों की आत्महत्या की घटनाएं भी हुई हैं। सरकारें किसानों की दशा सुधारने के लिए तरह–तरह की योजनाओं की घोषणाएं करती हैं, पंचायतों के माध्यम से विकास कार्यक्रम चलाने की योजनाएं तैयार करती हैं, मगर गांवों की दशा में अपेक्षित सुधार नजर नहीं आता।

ग्रामीण समाज पर फीचर लिखते समय हालांकि मुख्य विषय कृषि से जुड़ी समस्याएं हैं लेकिन इसके अलावा वहां के समाज के रीति–रिवाज, संस्कृति, परंपराए, सामाजिक बदलाव, शिक्षा का स्तर, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं, मूलभूत सुविधाओं का अभाव, आर्थिक स्थिति, कानून–व्यवस्था की हालत आदि भी महत्वपूर्ण विषय हैं। शहरी आबोहवा गांवों में घुस आने से ग्रामीण रहन–सहन में तेजी से बदलाव आ रहे हैं। गांवो में टेलीविजन, मोबाइल फोन और यातायात साधनों की पहुंच संभव होने से सूचनाओं के आदान–प्रदान और आवागमन में सहूलियत हुई है, लेकिन लोक परंपराएं धूमिल हो रही हैं। विकास की दौड़ में अगर कुछ सकारात्मक परिवर्तन हो रहे हैं तो कई नकारात्मक प्रभाव भी गांवों के परिवेश में दिखाई दे रहे हैं। इस पाठ में हम ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लेखन सीखने के क्रम में ऐसी ही बातों पर विचार करेंगे।

16.2 ग्रामीण समस्याओं पर फीचर का अभिप्राय

ग्रामीण समस्याओं से हमारा अभिप्राय संपूर्ण ग्रामीण परिवेश, समाज, परंपराओं, संस्कृतियों में आ रहे बदलाव और विकृतियों से है। ग्रामीण विकास के नाम पर चलाई जा रही योजनाओं के क्रियान्वयन, स्थानीय शासन को मजबूत और स्वायत्त बनाने के लिए चल रहे प्रयासों, आर्थिक विकास की गति, शिक्षा, रोजगार, कानून व्यवस्था आदि के बारे में विश्लेषण–विवेचन से है। आमतौर पर ग्रामीण परिवेश के बारे में लिखते समय लोग वहां की परंपराओं, संस्कृतियों में आ रहे बदलावों विकृतियों पर ही अधिक ध्यान केंद्रित करते हैं। ज्यादा हुआ तो किसानों की दुर्दशा और खेती में मूलभूत सुविधाओं के अभाव और सरकारी योजनाओं की गति का विवेचन, विश्लेषण करके अपनी जिम्मेदारी पूरी समझ लेते हैं। लेकिन गांवों में आर्थिक बदहाली, विविध टकरावों से उपजे सामाजिक तनाव, बेरोजगारी के कारण युवाओं में आ रहे भटकाव, वहां की महिलाओं, बच्चों की दशा, उनके मूल अधिकारों की अनदेखी और स्थानीय शासन में आ रही विकृतियों की तरफ कम लोगों का ध्यान जा पाता है। ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

पिछले कुछ सालों में जिस तेजी से संचार माध्यमों का प्रसार हुआ है उससे ग्रामीण इलाकों में भी पत्र–पत्रिकाओं की पहुंच आसान हुई है। गांवों में जहां कुछ उच्च शिक्षा प्राप्त लोग हैं, जो अध्यापक या दूसरे पेशों से जुड़े हैं वहीं काफी बड़ी संख्या में अर्द्ध–शिक्षित और नवसाक्षर भी हैं, जो पत्र–पत्रिकाएं पढ़ तो लेते हैं, लेकिन गंभीर और क्लिष्ट भाषा में होने के कारण अपने ही बारे में लिखी बातें समझ नहीं पाते।

उनका लाभ नहीं उठा पाते। ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय यह ध्यान रखना जरूरी है कि वे न सिर्फ पढ़े–लिखे लोगों को बल्कि नवसाक्षरों और कम पढ़े–लिखे लोगों को ध्यान में रखकर भी लिखे जाएं। ग्रामीण समाज में अब भी तमाम तरह के अंधविश्वास और कुरीतियां व्याप्त हैं। उन्हें दूर करने के लिए सरकारी और गैरसरकारी संस्थाएं निरंतर प्रयास कर रही हैं। इसमें पत्र–पत्रिकाओं की भी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। इसलिए उन कुरीतियों के खिलाफ वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के उद्देश्य से भी फीचर लिखे जाते हैं।

16.3 ग्रामीण फीचर के लिए विषय का चयन और लेखन

ग्रामीण समाज हालांकि कृषि आधारित है, लेकिन शहरी और औद्योगिक विकास के चलते इसमें कई तरह के परिवर्तन आ रहे हैं। ये परिवर्तन कुछ सकारात्मक हैं तो कुछ नकारात्मक भी। सरकारी योजनाओं और शहरी चलन के गांवों में प्रवेश से वहां के रहन–सहन और सुविधाओं में बेहतरी आई है तो कई पारंपरिक और लोक संस्कृतियां नष्ट भी हुई हैं। सामाजिक बदलाव का एक प्रभाव मध्यवर्गीय तनाव के रूप में भी दिखाई देने लगा है। ग्रामीण फीचर के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों से सम्बन्धित विषय चुने जा सकते हैं –

i) कृषि संबंधी फीचर
ii) ग्रामीण विकास संबंधी फीचर
iii) सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर
iv) लोकजीवन संबंधी फीचर

कह सकते हैं कि यही ग्रामीण फीचर के प्रकार भी हैं।

16.3.1 कृषि संबंधी फीचर

जैसा कि हम पहले कह आए हैं, ग्रामीण समाज मुख्य रूप से कृषि आधारित है। लेकिन आबादी बढ़ने के साथ–साथ जहां लोगों की निर्भरता दूसरे क्षेत्रों पर बढ़ी है वहीं परिवारों के बंटने से खेत भी बंटे हैं। भवनों के लिए जमीनों के उपयोग से खेती लायक जमीन कम हुई है। इस तरह छोटे खेतिहर किसानों की संख्या बढ़ी है। जो भूमिहीन किसान थे, उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं आया है। लाखों एकड़ जमीन अब भी बंजर पड़ी हुई है। भूदान के जरिए जो जमीनें प्राप्त हुई थीं उनका बंटवारा अभी तक ठीक से नहीं हो पाया है। पश्चिम बंगाल को छोड़कर अन्य राज्यों में भूमि हदबंदी कानूनों पर अमल न हो पाने के कारण अतिरिक्त जमीन पर कब्जा जमाए बड़े किसानों से जमीनें लेकर सीमांत और भूमिहीन किसानों को बांटने का काम तो दूर की बात, बंजर भूमि का बंटवारा भी अभी तक सुनिश्चित नहीं हुआ है। कई राज्यों में इसे लेकर आंदोलन चलाए जा रहे हैं। औद्योगिक इकाइयों को कारोबार फैलाने के लिए राज्य सरकारों द्वारा प्रोत्साहित किए जाने के कारण खेती योग्य भूमि का काफी बड़ा हिस्सा औद्योगिक इकाइयों के हिस्से में चला गया है। इस तरह तमाम कोशिशों के बावजूद कृषि उत्पादन की दर में अपेक्षित सफलता हासिल नहीं हो पा रही है।

खेती योग्य जमीन की कमी के अलावा बिजली, सिंचाई के साधन, खाद–बीज और कीटनाशकों की सुविधाएं ठीक से उपलब्ध न हो पाने के कारण भी कृषि के प्रति किसानों की दिलचस्पी कम हुई है। कई बड़े किसान खेती का रास्ता छोड़ कर

व्यवसाय की तरफ बढ़ रहे हैं। पिछले कुछ साल में खेती के लिए तकनीकी साधनों के इस्तेमाल को बढ़ावा देने की वजह से किसानों का इस्तेमाल बड़े ट्रैक्टरों और हार्वेस्टर आदि के प्रति रुझान बढ़ा है। आसान शर्तों पर कर्ज की सुविधाएं उपलब्ध होने के कारण काफी बड़ी तादाद में कृषि उपकरण जुटा लिए हैं। जिन किसानों को कृषि उपकरणों की जरूरत नहीं भी है, या उनके पास जमीन कम है उन्होंने भी दूसरे किसानों की देखा–देखी या होड़ में कर्ज लेकर महंगे कृषि उपकरण खरीद लिए हैं। इस तरह अनेक किसान कर्ज के बोझ तले दब गए हैं। खाद बीज कीटनाशकों के लिए कर्ज लेने और फसल बर्बाद होने या उनकी उचित कीमत न मिल पाने के कारण भी काफी बड़ी संख्या में किसानों के सर पर कर्ज लदा है। सब्ज़ी उगाने वाले किसानों की स्थिति इनमें सबसे खराब है, क्योंकि फसल खराब होने या उचित कीमत न मिल पाने के कारण उन पर एकदम से बोझ बढ़ जाता है। यही वजह है कि गन्ना, कपास और सब्जियां उगाने वाले किसानों में पिछले कुछ सालों में आत्महत्या की प्रवृति बढ़ी है।

कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से केन्द्र और राज्य सरकारें तरह–तरह की योजनाएं चला रही हैं। कृषि ऋण के लिए आसान शर्ते, किसान क्रेडिट कार्ड, फसलों के समर्थन मूल्य में वृद्धि, खाद–बीज– कीटनाशकों की उपलब्धता बढ़ाने, सिंचाई के पारंपरिक और गैर–पारंपरिक साधनों का विकास करने, कृषि उत्पादों की राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में पहुंच सुनिश्चित करने के लिए योजनाएं चलाई जा रही हैं। गांवों में गरीबी रेखा के नीचे जी रहे लोगों के लिए अंत्योदय और ग्रामीण रोजगार योजना के तहत कम से कम सौ दिन का रोजगार मुहैया कराने जैसी योजनाएं चलाई जा रही हैं।

इन तमाम योजनाओं और सुविधाओं के चलते गांवों में कई बेहतर नतीजे आए हैं और किसानों में खेती के प्रति उत्साह बढ़ा है। जो लोग खेती की बजाय मजदूरी और दूसरे धंधों पर निर्भर हैं उन्हें भी काफी सहूलियत हुई है। कृषि अनुसंधान के कारण खेती में नए–नए प्रयोग भी देखने को मिले हैं। मगर अब भी किसानों की दशा को बेहतर बनाना एक बड़ी चुनौती है। दूसरे औद्योगिक क्षेत्रों का जिस तेजी से फैलाव हो रहा है, देश के सकल घरेलू उत्पाद में उनकी भागीदारी निरंतर बढ़ रही है, लेकिन कृषि क्षेत्र के मुख्य रूप से मौसम के मिजाज पर निर्भर होने के कारण इसके बारे में कोई भविष्यवाणी करना या आर्थिक विकास में इसकी सहभागिता का दावा करना संभव नहीं है। गौरतलब है कि सकल घरेलू उत्पाद की दर कृषि उत्पादन पर अधिक निर्भर करती है। लेकिन कृषि को उद्योग का दर्जा आज तक नहीं मिल सका है। केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच फसलों के समर्थन मूल्य को लेकर अक्सर रस्साकशी चलती रहती है। फसलों की खरीदारी का उचित प्रबंध न होने, विपणन और प्रोसेसिंग, भंडारण आदि की सुविधा न होने के कारण फल–सब्जियां और दूसरी कई कच्ची फसलों के मामले में किसानों को स्थानीय मंडियों पर निर्भर रहना पड़ता है। जिस मौसम में कच्ची फसलों का उत्पादन होता है उसी मौसम में उन्हें बेचने के अलावा किसानों के पास कोई चारा नहीं होता। इसलिए उत्पादन और खपत में असमानता होने के कारण औने–पौने दाम पर फल और सब्जियों को खपाने के अलावा किसानों के पास दूसरा चारा नहीं होता। जिन कुछ क्षेत्रों में शीतगृहों (कोल्ड स्टोरेज) की व्यवस्था है वहां आलू, टमाटर, सेब आदि के भंडारण के अलावा दूसरी फसलों के भंडारण की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाती। स्थानीय मंडियों से बाहर भेजे जाने की सुविधा न होने के कारण अधिकांश कच्ची फसलों की खपत नहीं हो पाती और वे सड़

कर खराब हो जाती हैं। इस तरह कई बार किसान को लागत भर का पैसा भी वसूल नहीं हो पाता।

खेती में बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए किसानों को नियमित मिट्टी परीक्षण, बंजर भूमि को खेती लायक बनाने, सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध कराने और कीड़े या फसलों में रोग लगने की स्थिति में बेहतर जानकारी और सुविधाएं उपलब्ध कराने की जरूरत होती है। हालांकि हर राज्य में कृषि अनुसंधान केन्द्र और ब्लॉकों पर इसकी सुविधाएं उपलब्ध हैं, मगर सभी किसानों की पहुंच उन तक नहीं हो पाती। अब भी देश के ज्यादातर किसान जागरूकता न होने और अपेक्षित सरकारी सहयोग प्राप्त न हो पाने के कारण कृषि संबंधी पारंपरिक साधनों का इस्तेमाल करते हैं। वे खेतों की मिट्टी की जांच नहीं करा पाते, जिससे उसकी उर्वरा शक्ति को बेहतर बनाने के उपाय नहीं करा पाते हैं। किसानों में खेती के प्रति जागरूकता पैदा करने, खाद–बीज–कीटनाशक के इस्तेमाल और आधुनिक तकनीकों के बारे में सलाह उपलब्ध कराना ब्लॉक और कृषि केंद्रों के अधिकारियों की जिम्मेदारी होती है। मगर वे इसके प्रति प्रायः लापरवाह दिखाई देते हैं। नतीजतन, कई सरकारी योजनाओं का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता।

इस प्रकार कृषि संबधी फीचर लिखते समय लेखक से अपेक्षा की जाती है कि जुड़ी आर्थिक समस्याओं, मूलभूत सुविधाओं और सरकारी योजनाओं के बारे में उसे विस्तृत जानकारी हो और वह उनके विश्लेषण की क्षमता रखता हो। इसके लिए जरूरी है कि कृषि संबंधी अनुसंधानों, सरकारी योजनाओं और दूसरे देशों में चल रहे प्रयोगों के बारे में निरंतर सूचनाएं हासिल करते रहें। सिर्फ खेती की बदहाली या कृषि क्षेत्र में आने वाली गिरावट के बारे में लिखना कृषि संबंधी फीचर का उद्देश्य नहीं होता। कृषि संबंधी अनुसंधानों और तकनीकी प्रयोगों, नई विधियों के बारे में जानकारी उपलब्ध कराना भी कृषि संबंधी फीचर का उद्देश्य होता है। चूंकि ज्यादातर किसान या तो अनपढ़ हैं या कम पढ़े लिखे हैं इसलिए खेती के प्रति उनमें जागरूकता पैदा करना भी ऐसे फीचर का मकसद होना चाहिए। एक उदाहरण देखिए –

''एक तो झारखंड में रूह कंपा देने वाली गरीबी, उस पर अकाल की छाया। राज्य के 70 फीसद परिवारों को एक जून की रोटी भी नसीब नहीं होती है। भूख से बिलबिलाते ये गरीब जंगली साग और पेड़ों की जड़ों को उबाल कर नमक के साथ खाकर किसी तरह अपना पेट भरते हैं। जंगली साग खाकर ये कई तरह की बीमारियों के शिकार होते हैं और मौत के काल में समा जाते हैं। औरतों का हाल तो और बुरा है। बुरी तरह कुपोषित ये महिलाएं अपने बच्चे को न तो अपना दूध पिला पाती हैं और न ही अनाज का एक दाना दे पाती हैं। नतीजतन, कई बच्चे अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते हैं। यह महज संयोग नहीं है कि पूरे देश में शिशु मृत्यु दर सबसे अधिक झारखंड में ही है।''

बुझे चेहरे : सूखे खेत–प्रशांत शरण (सहारा समय–17 सितंबर 2005)

16.3.2 ग्रामीण विकास संबंधी फीचर

केंद्र और राज्य सरकारें गांवों के विकास के लिए तरह–तरह की योजनाएं चलाती रहती हैं। गांवों में अनेक समस्याओं की जड़ में लोगों में शिक्षा और समस्याओं से निपटने के प्रति जागरूकता का अभाव है। इसलिए लोगों को शिक्षित बनाने के मकसद से सभी लोगों तक शिक्षा की पहुंच सुनिश्चित करने के उद्देश्य से सर्वशिक्षा

अभियान शुरू किया गया है। यूपीए सरकार ने शिक्षा मद में पहले से अधिक धन मुहैया कराने का वचन दिया है। पहले सकल घरेलू उत्पाद का महज चार फीसद शिक्षा मद में खर्च करने का प्रावधान था। वह भी पूरी तरह खर्च नहीं हो पाता था। इस मद के धन में से कटौती करके दूसरे मदों में खर्च कर दिया जाता था। यूपीए सरकार ने न सिर्फ इस धन को पूरी तरह शिक्षा मद में खर्च का आश्वासन दिया है, बल्कि इसे बढ़ा कर सकल घरेलू उत्पाद का छह फीसद करने का भी वचन दिया है। केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की शैक्षणिक संस्थाओं की वित्तीय स्थिति सुधारने के लिए गठित समिति ने भी सुझाव दिया था कि सकल घरेलू उत्पाद का कम से कम छह फीसद शिक्षा पर खर्च किया जाना चाहिए और उसमें से दो से तीन फीसद स्कूली शिक्षा पर खर्च होना चाहिए। सरकार ने उस सिफारिश को स्वीकार कर लिया है। इससे प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था में सुधार की उम्मीद बढ़ी है।

फिलहाल ज्यादातर गांवों में प्राथमिक स्कूल नहीं हैं। तीन–चार गांवों के बीच एक स्कूल है और आठ–दस गांवों पर एक माध्यमिक स्कूल। उच्चतर माध्यमिक और उच्च शिक्षा के लिए शैक्षणिक संस्थानों की कमी का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है। जहां प्राथमिक विद्यालयों की सुविधा है वहां अनेक स्कूल बिना भवन के पेड़ों के नीचे और खुले आसमान के नीचे चलाए जा रहे हैं। अनेक स्कूलों में टाट–पट्टी, श्यामपट, बच्चों के लिए शौच और पीने के पानी जैसी बुनियादी सुविधाएं उपलब्धता की उम्मीद करना बेमानी हैं। ऐसे में इन स्कूलों में पुस्तकालय और दूसरी पाठ्य सहायक सामग्री की उपलब्धता की उम्मीद करना बेमानी है। अनेक स्कूलों में जरूरत भर के अध्यापक भी नहीं है। पूरे देश में वैसे ही प्रति अध्यापक छात्रों की संख्या अधिक है। यही वजह है कि कुछ साधन–संपन्न लोग अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजने लगे हैं और जिनके पास फीस दे पाने की क्षमता नहीं है वे बुनियादी शिक्षा के प्रति भी अनुत्साहित हैं। आदिवासी और जनजातीय लोगों में शिक्षा के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए हालांकि सरकारी और गैर–सरकारी संगठन लगातार जागरूकता अभियान चला रहे हैं, लेकिन इसका अपेक्षित लाभ मिलता नजर नहीं आ रहा। इससे सबको शिक्षा और समान शिक्षा का संवैधानिक तकाजा पूरा नहीं हो पाता।

सड़क, बिजली, पेयजल संबंधी समस्याओं को सुलझाने के लिए ग्राम पंचायतों को स्वायत्तता दी गई है। केंद्र से मिलने वाले धन को राज्यों की मध्यस्थता की बजाय सीधे पंचायतों तक पहुंचाने का संवैधानिक प्रावधान किया गया है। पंचायतों और स्थानीय निकाय संस्थाओं को यह अधिकार है कि वे ग्रामीण विकास संबंधी योजनाएं खुद तैयार करें, उनके खर्च का खाका बनाएं और उन्हें लागू करें। कई राज्यों में पंचायतों, गांवों के विद्युतीकरण, गलियों में लाइटें लगवाने, खड़ंजा कराने, पारंपरिक जल स्रोतों को पुनर्जीवित करने, महिलाओं को साक्षर और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम और घरेलू और कुटीर उद्योगों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की शुरुआत की गयी है। इससे गांवों के आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों और महिलाओं में आर्थिक आत्मनिर्भरता आई है। मुख्य सड़कों से गांवों के जुड़ने से कृषि उत्पाद को बाजार और मंडियों तक पहुंचाने में काफी सहूलियत हुई है।

इसके अलावा केंद्र सरकार गांवों और किसानों की दशा सुधारने के लिए कई तरह की योजनाएं चला रही है। शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन और सर्व शिक्षा अभियान शुरू किए गए हैं। ग्रामीण विद्युतीकरण योजना के तहत हर गांव तक बिजली पहुंचाने का काम चल रहा है। इसके अलावा पंचायतों को अधिक स्वायत्तता और सीधे धन मुहैया कराकर

ग्रामीण क्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं को बेहतर बनाने के प्रयास हो रहे हैं। संविधान के तिहत्तरवें संशोधन के जरिए पंचायतों को अधिक अधिकार प्रदान कर, उन्हें सीधे धन मुहैया कराकर और विकास संबंधी योजनाएं तैयार करने, धन खर्च करने और सामूहिक रूप से निर्णय कर सकने का अधिकार दे कर ग्रामीण विकास को बल प्रदान करने की कोशिश की गई है।

मगर ज्यादातर पंचायतें अब भी पारंपरिक मान्यताओं से बंधी, जाति और समुदाय में बंटी हुई हैं। पंचायत चुनाव राजनीतिक रंग ले चुके हैं। अधिक अधिकार मिलने के कारण कई लोग पंचायत चुनावों में बाहुबल का इस्तेमाल करने से भी नहीं हिचकते। यही कारण है कि अक्सर पंचायत चुनावों में हिंसक घटनाएं होती हैं। हालांकि पंचायत में महिलाओं और अनुसूचित जन जाति के लोगों के लिए सीटें आरक्षित कर समाज की मुख्यधारा से जोड़ने की कोशिश की गई है, लेकिन पंचायती राज अधिनियम के लागू हुए बीस साल बीतने के बाद भी यह मकसद पूरी तरह कामयाब नहीं हो पाया है। ज्यादातर पंचायतों पर गांव के शक्तिशाली लोगों का कब्जा है। आरक्षण की वजह से जिन सीटों पर महिलाएं निर्वाचित हुई हैं उन पर उनके पति अधिकार जमाए हुए हैं। पंचायत का सारा कामकाज वही देखते हैं। जहां दलित महिलाएं चुनी गई हैं वहां सवर्ण कहे जाने वाले या गांव के दबंग लोग उन्हें स्वतंत्र रूप से कोई भी निर्णय करने में बाधा डालते हैं। कई जगहों पर उन्हें अपमानित करने की घटनाएं भी सामने आई हैं। इसके अलावा जिला और ब्लॉक अधिकारियों द्वारा पंचायतों को जो मदद मिलनी चाहिए वह नहीं मिल पाने के कारण भी कई योजनाएं लंबे समय तक लटकी रहती हैं या उन पर काम नहीं शुरू हो पाता। ऐसे में गांवों के लिए चलाए जा रहे विकास कार्यक्रम या तो सक्षम लोगों तक सिमट कर रह जाते हैं या उनके लिए मुहैया कराए गए धन का दुरुपयोग होता है।

ग्रामीण विकास संबंधी फीचर लिखते समय इन तमाम पक्षों को ध्यान में रखना जरूरी है। सिर्फ गांवों की बदहाली या सरकारी योजनाओं के बेहतर पक्षों पर ध्यान केंद्रित नहीं होना चाहिए। दोनों का निष्पक्ष विवेचन फीचर का लक्ष्य होना चाहिए। अगर ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को सही तरीके से संचालित कर पाने में ग्राम पंचायतें अक्षम साबित हुई हैं तो इसका भी विश्लेषण होना चाहिए और जिला या ब्लॉक प्रशासन से अपेक्षित सहयोग नहीं मिल पा रहा है या वे पंचायतों को ग्रामीण विकास योजनाओं के लिए प्रोत्साहित कर पाने में अक्षम साबित हो रहे हैं तो उसका भी विवेचन किया जा सकता है। लेकिन फीचर एकांगी न हो, इसके लिए सभी पक्षों का संतुलित तरीके से विश्लेषण किया जाना चाहिए। एक उदाहरण देखिए –

''गरीबी का धूल–धूसरित इलाका माना गया कालाहांडी बहुत चिंताजनक तस्वीर पेश करता है। भवानी शंकर नायक की ओर से देश के सबसे गरीब जिलों में से एक कालाहांडी में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के प्रभाव पर किए गए अध्ययन से पता चलता है कि इस पूरे कार्यक्रम का जोर मिल मालिकों, व्यापारियों, बड़े किसानों और नौकरशाहों को संतुष्ट करने पर रहा है, न कि उपभोक्ता जरूरतें पूरी करने पर। यह कहानी शहरी और ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों की एक जैसी है।''

बेहिसाब घपला : शंकर अय्यर (इंडिया टुडे, 5 अक्तूबर 2005)

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें :

1) ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लेखन से आपका क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) कृषि संबंधी फीचर लिखते समय किन पक्षों पर विशेष रूप से ध्यान रखने की जरूरत होती है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) ग्रामीण विकास संबंधी फीचर में किस तरह संतुलन बिठाया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

16.3.3 सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर

अक्सर गांवों में सड़क, बिजली, पेयजल और स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को प्रमुखता से प्रकाशित किया जाता है। इन समस्याओं से निपटने के लिए प्रयासों की जरूरत से इनकार नहीं किया जा सकता, लेकिन लोगों में अशिक्षा, अंधविश्वास, स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता न होने के कारण भी गांवों में अनेक समस्याएं पैदा होती हैं। गांवों में रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन और सार्वजनिक परिवहन की सुविधाएं तो पहुंच रही हैं जिससे लोगों में देश दुनिया में हो रहे विकास संबंधी सूचनाओं का तेजी से प्रसार हो रहा है। लोग जीवन शैली में बदलाव लाने के प्रति उत्सुक दिखाई देने लगे हैं, लेकिन वैज्ञानिक दृष्टिकोण न पैदा होने के कारण वे अब भी अनेक कुरीतियों में जकड़े हुए हैं। स्वास्थ्य और शिक्षा संबंधी जागरूकता न होने के कारण अनेक लोग निरक्षर रह जाते हैं, खानपान में सावधानी न बरतने और साफ–सफाई पर ध्यान न देने के कारण बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

गरीबी में जीवन बिता रहे अधिकांश माता–पिता अपने बच्चों को इसलिए स्कूल नहीं भेजते कि जब उन्हें अंततः पैतृक पेशे से ही जुड़े रहना है तो उनके लिए

पढ़ाई–लिखाई का कोई अर्थ नहीं है। रोजगार के नए अवसर उपलब्ध न हो पाने के कारण भी अनेक माता–पिता की धारणा है कि उनके बच्चों को नौकरी मिलनी नहीं है। तो क्यों उनकी पढ़ाई पर पैसे खर्च करें और समय बर्बाद करें? इससे बेहतर है कि बचपन से ही उन्हें किसी तकनीकी काम में लगाएं या पैतृक पेशे से जोड़ें। इस तरह सबको शिक्षा का मकसद पूरा नहीं हो पाता। लड़कियों की शिक्षा के मामले में गांवों में स्थिति और भी बदतर है। उन्हें बचपन से ही घरेलू कामकाज में लगा दिया जाता है। कम उम्र में उनकी शादी कर दी जाती है जिससे उनकी पढ़ाई–लिखाई हो पाना तो दूर, वे अपने जीवन के बारे में भी ठीक से नहीं जान पातीं। कम उम्र में विवाह हो जाने से बालिग होने से पहले ही वे मां बन जाती हैं और जल्दी ही कई रोगों से ग्रस्त हो जाती हैं। संतुलित आहार न ले पाने के कारण आधे से अधिक महिलाओं में खून की कमी पाई जाती है। गर्भावस्था के दौरान नियमित जांच न कराने, खानपान पर ध्यान न देने और साफ–सफाई के प्रति जागरूक न होने के कारण अक्सर महिलाओं की मौत हो जाती है।

कई गांवों में अंधविश्वास, जातिवाद और छूआछूत जैसी कुरीतियां अब भी जस की तस जड़े जमाए हुई हैं। इसीलिए अनेक स्थानों पर 'सत परीक्षा' के नाम पर महिलाओं के हाथ जलते अंगारे या खौलते कड़ाह में डलवा दिए जाते हैं, चुड़ैल या डायन घोषित कर कई महिलाओं को पत्थर मारकर मार डाला जाता है। दूसरी जाति के लड़के से प्रेम करने पर अनेक लड़कियों को मौत के घाट उतार दिया जाता है। बाल विवाह, दहेजप्रथा और आडंबरपूर्ण विवाह जैसी कुप्रथाएं अब भी कायम हैं। उच्च और निम्न कही जाने वाली जातियों के बीच अब भी छुआछूत जैसी कुरीतियां दरार कायम किए हुए हैं। अपने संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरूकता पैदा होने के कारण ग्रामीण समाज की निचली कही जाने वाली जातियों के लोगों ने ऊंची कही जाने वाली जातियों की छुआछूत जैसी दकियानूसी मानसिकता को स्वीकार करने से इनकार करने की हिम्मत जरूर दिखाई है और राजनीतिक रूप से वे सक्षम हुई हैं। मगर चूंकि ऊंची कही जाने वाली जातियों को उनमें आई यह जागरूकता नागवार गुजरती है, वे अब भी निचली कही जाने वाली जातियों को अपनी प्रजा के रूप में देखती हैं। उच्च जाति के समुदाय चाहते हैं कि आजादी के पहले के समय की तरह वे उनके इशारों पर काम करें और उनकी खिदमत में हमेशा सिर झुकाए तैयार खड़ी रहें। मगर जब वे ऐसा करने से इनकार कर देती हैं तो ऊंची कही जाने वाली जातियों के लोग इसका बदला लेने की ताक में अक्सर दिखाई देते हैं। इसी का नतीजा है कि देश के विभिन्न हिस्सों में अक्सर जातीय संघर्ष की घटनाएं सामने आती हैं। इससे ग्रामीण समाज में जातियों के आधार पर गुट बन गए हैं।

विडंबना है कि इस जातीय संघर्ष को कुछ राजनीतिक दल अपने वोट के लिए उकसाते रहते हैं। इस तरह पहले ग्रामीण समाज में लोगों के बीच पहले जो आपसी सहयोग, भावनात्मक लगाव और एकजुटता दिखाई देती थी वह वैमनस्यता में बदल गई है। पिछले कुछ समय से गांवों में अल्पसंख्यक और बहुसंख्यकों के बीच भी तनाव गहरे हुए हैं। ग्रामीण समाज के विकास पर फीचर के लिए इन तमाम कुरीतियों, सामाजिक बिखराव और जातीय टकराव से संबंधित विषय हो सकते हैं। विषय का चुनाव करते समय सावधानी से समस्याओं की पहचान करने की जरूरत होती है। समाज में फैली कुरीतियों को दूर करने में हालांकि कई सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाएं प्रयासरत हैं, लेकिन उनका कहां तक असर पड़ा है, इसका विवेचन भी होना चाहिए। सामाजिक विद्वेष को दूर करने में पुलिस और जिला प्रशासन किस तरह की

भूमिका अदा कर रहा है, इसका विश्लेषण भी जरूरी है। अशिक्षा, गरीबी, सरकारी योजनाओं का ठीक से लागू न हो पाना, आडंबरपूर्ण जीवन की लालसा, पुरानी मान्यताएं और अंधविश्वास ग्रामीण समाज के विकास में बड़ी बाधाएं हैं। इन्हें दूर करने के लिए क्या प्रयास होने चाहिए, इसके उपायों का भी विवेचन करना फीचर का विषय हो सकता है। एक उदाहरण देखिए –

''महिला प्रतिनिधित्व वाली अधिकांश पंचायतों में यह देखा गया है कि नेपथ्य में कोई पुरुष सदस्य काम कर रहा है। पंचायती राज संस्थाओं की नियमित बैठकों तथा सभाओं में भी इन पुरुषों को राजनैतिक, प्रशासनिक व सामाजिक स्तर पर स्वीकार किया जाता है और मान्यता दी जाती है। हाल ही में इंदिरा गांधी पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास द्वारा चलाए गए पंचायती राज क्षमता विकास अभियान में प्रधान और विकास अधिकारियों के संयुक्त आमुखीकरण कार्यप्रणाली में प्रधान महिलाओं के साथ आए परिवार के पुरुष सदस्यों को प्रशिक्षण से जोड़ने की पैरवी करने वाले एक सांसद का तर्क था कि उन्हें भी प्रशिक्षण से वंचित न रखा जाए, क्योंकि काम तो उन्हें ही करना है। मीडिया की यह खबर कि 'घूघंट की ओट में कुछ नहीं बोली महिला प्रतिनिधि' तथा प्रशासनिक अधिकारियों व स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों की मौन स्वीकृति इस बात का संकेत है कि महिला जन प्रतिनिधियों के लिए सकारात्मक वातावरण की अभी कमी है।''

सामाजिक **दृष्टिकोण में बदलाव : दिलीप बीदावत (पंचायती राज अपडेट, अगस्त 2005)**

16.3.4 लोकजीवन संबंधी फीचर

हालांकि शहरी जीवन की चमक–दमक से प्रभावित होकर ग्रामीण समाज में अनेक आधुनिक सुविधाओं के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ा है, लेकिन अब भी वहां अनेक लोक परपराएं जीवित हैं। होली, दीवाली, दशहरा, छठ, तीज जैसे त्योहार मनाने का तरीका, गाने–बजाने, मनोरंजन के साधनों का इस्तेमाल कहीं न कहीं गांवों में अब भी पुराने रूप में विद्यमान है। जिन ग्रामीण समाजों में लोग शैक्षिक रूप से पिछड़े हैं वहां लोक परपराएं अधिक सुरक्षित हैं। जिन ग्रामीण समाजों में लोग पढ़े–लिखे अधिक हैं और उनका शहरों से संपर्क लगातार बना रहता है वहां लोक परंपराएं धीरे–धीरे लुप्त होती गई हैं। गांवों में पहले गोंड़, धोबी, अहीर जातियों के अपने लोक गीत और नृत्य हुआ करते थे जिन्हें गाने और प्रस्तुत करने के अपने तरीके हुआ करते थे। धोबी गान और नृत्य–नाटक में जहां मुख्य रूप से मृदंग और छोटी झाल का इस्तेमाल किया जाता था वहीं गोंड़ गायन और नृत्य में हुडुक और बड़ी झाल का। अहीरों द्वारा गाई जाने वाली नजारी में कोई वाद्य यंत्र इस्तेमाल नहीं किया जाता था। कई अवसरों पर नाटक खेलने की परंपरा थी। ये नाटक प्रायः ग्रामीण जीवन की समस्याओं या मिथकीय–पौराणिक कथाओं पर आधारित होते थे। ये लोक परंपराएं थोड़े–बहुत अंतर के साथ अनेक राज्यों में प्रचलित हैं।

हर राज्य इलाके की भौगोलिक बनावट, लोगों के रहन–सहन के अनुसार वहां की अपनी लोक परंपराएं हैं। गायन, वाद, नृत्य की अलग शैलियां हैं। यह विचित्र नहीं है कि पूरे देश में लोकगीत पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं ज्यादा गाती हैं। नाटकों और वाद्य यंत्रों के साथ गाए जाने वाले गीतों में पुरुषों की भागीदारी अधिक होती है। महिलाएं प्रायः सामूहिक रूप से गीत गाती हैं और वे वाद्य यंत्रों का उपयोग नहीं करतीं।

लगभग हर उत्सव और अवसर के लिए गीत हैं। लेकिन ज्यादा विविधता विवाह गीतों में पाई जाती है। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि विवाह समाज में सबसे बड़ा उल्लास का अवसर होता है। ग्रामीण समाज में चूंकि एक ही तरह के काम करते–करते लोगों में एकरसता–सी आ जाती है इसलिए विवाह के अवसर पर वे कई दिन पहले से तैयारी में लग जाते हैं। चाहे वह लड़की का विवाह हो या लड़के का, उल्लास दोनों में बराबर दिखाई देता है। महिलाएं कई दिन पहले से गायन शुरू कर देती हैं। यही वजह है कि विवाह गीतों में सबसे अधिक विविधता दिखाई देती है। कुआं पूजन, मांड़ो, हल्दी, नहछु–नहावन, द्वाराचार, डलिया पूजन, विवाह, कोहबर, भोजन के समय गाली गायन, विदाई आदि के गीत आमतौर पर गाए जाते हैं।

लोकगीतों में आल्हा, बिरहा, होली चैती, कजरी, कीर्तन आदि की परंपरा भी है। ये गीत प्रायः पुरुष गाते हैं। इसके अलावा बिहुला, सोरठी–बृजभार, सारंगा–विजयमल जैसी कथाओं को गीतों में ढाल कर गाने की परंपरा है और इन्हें महिला और पुरुष दोनों गाते–सुनाते हैं। फिल्मी गीतों और संगीत के कैसेट बनाने वाली कंपनियों के प्रचार–प्रसार के कारण पारंपरिक लोकगीत धीरे–धीरे नष्ट हो रहे हैं। शादी अवसर पर भी फिल्मी धुनों पर गीत रच कर गाए जाने लगे हैं। होली, चैती आदि के कैसेट आ जाने से सामूहिक गायन की बजाय अब गांवों में भी वही बजाये जा रहे हैं। बिरहा व्यावसायिक गायन बन गया है। कीर्तन की जगह कैसेटों में आने वाले भजनों ने ले ली है। इस तरह पारंपरिक लोक वाद्यों और गायन शैली की परंपरा धीरे–धीरे लुप्त हो रही है। लोक नाटक अब सिर्फ रामलीला तक सीमित होकर रह गए हैं। लोकगीतों, लोक वाद्यों की तरह लोक चित्रकलाएं भी धीरे–धीरे विलुप्त हो रही हैं। पहले गांवों में चावल को पीस कर, वनस्पतियों और उनके फूलों से रंग निकाल दीवारों पर चित्रकारी की परंपरा थी। दीवाली, रामनवमी, विवाह आदि के अवसर पर मिटटी, गेरू आदि से तरह–तरह के भित्ति चित्र बनाए जाते थे। अब वह परंपरा धीरे–धीरे नष्ट हो रही है। भित्ति चित्र बनाने की शैलियां भी विलुप्त हो रही हैं।

इन लुप्त होती परंपराओं और शैलियों को संरक्षित करने की जरूरत है। पारंपरिक गीतों, लोक वाद्यों और गायन शैली को सुरक्षित रखने की दरकार है। इस दिशा में सरकारें लोगों को प्रोत्साहित करने का प्रयास तो करती हैं, लेकिन जमीनी स्तर पर, इसके प्रयास कम ही दिखते हैं। कुछ लोग सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने के लिए शहरों तक इस तरह के प्रयास कर तो लेते हैं, लेकिन गांवों में जाकर इन परंपराओं को सुरक्षित रखने के प्रयास नहीं हो पाते। राजस्थान में कोमल कोठारी ने अपने स्तर पर इसका गंभीर प्रयास किया था। उन्होंने लोक कलाओं को सुरक्षित संरक्षित करने के लिए एक केंद्र की स्थापना की और विभिन्न इलाकों के लुप्त होते गीतों, गायन शैलियों वाद्य यंत्रों को सुरक्षित–संरक्षित करने का प्रयास किया और नए लोक कलाकारों को प्रोत्साहित किया।

लोक जीवन पर आधारित फीचर के लिए विषय का चुनाव करते वक्त लोक परंपराओं में वहां गाए जाने वाले गीतों, वाद्य यंत्रों को बजाने की शैली, भित्ति चित्र आंकने के तरीके आदि को भी समाहित किया जाना चाहिए। इस फीचर का एक प्रमुख उद्देश्य लोक कलाओं के बारे में जानकारी प्रदान करने के साथ–साथ युवा पीढ़ी को उनके प्रति प्रोत्साहित करना भी होना चाहिए ताकि वे उन्हें संरक्षित–सुरक्षित करने के लिए आगे आएं। व्यावसायिकता पारंपरिक कलाओं को नष्ट कर रही है, इसका बोध युवा पीढ़ी में पैदा होना चाहिए। फिल्मों या कैसेटों के जरिए लोक धुनों का इस्तेमाल जरूर हो रहा है, लेकिन लोक कलाकार विलुप्त हो रहे हैं। लोक वाद्य और उन्हें बजाने की

शैलियां अंधेरे में जा रही हैं। उन्हें बचाने का प्रयास भी होना चाहिए। इसलिए न सिर्फ गांवों, आदिवासी, जनजातीयों के रहन–सहन, जीवन–शैली, बल्कि उनकी लुप्त होती लोक परंपराओं को भी केंद्र में रखकर फीचर लेखन किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लेखन के लिए विषय का चुनाव करते वक्त किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

2) ग्रामीण जीवन की समस्याओं पर फीचर लेखन करते समय किस तरह संतुलन बिठाया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) लोक जीवन पर फीचर लेखन का मुख्य उद्देश्य क्या होना चाहिए और लोक परंपराओं को सुरक्षित –संरक्षित करने में एक फीचर किस तरह की भूमिका निभा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

16.4 भाषा–शैली और प्रस्तुति

ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय विषय के चुनाव में सावधानी के साथ–साथ इस बात का ध्यान रखना भी जरूरी होता है कि जिस विषय को उठा रहे हैं उसकी पूरी तैयारी हो। संबंधित विषय पर पर्याप्त आंकड़े इकट्ठा करें। ये आंकड़े सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं द्वारा किए गए सर्वेक्षणों–अध्ययनों से भी प्राप्त हो सकते हैं और इंटरनेट, अखबारों–पत्रिकाओं से भी। लेकिन ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखने वाले से यह भी उम्मीद की जाती है कि उसका जुड़ाव भी गांवों से हो। सिर्फ तथ्यों

की जानकारी प्राप्त कर लेने या अध्ययन से समस्याओं के बारे में जान लेने भर से फीचर की विश्वसनीयता मुकम्मल नहीं होती, तो गांवों में जाकर वहां के लोगों से बातचीत करके और संबंधित अधिकारियों, पंचायत प्रतिनिधियों से जानकारी हासिल करके समस्या की तह तक जाने की कोशिश करनी चाहिए।

ग्रामीण समस्याओं में महिलाओं, बुजुर्गों की स्थिति, कृषि क्षेत्र में किसानों की परेशानियां, सामाजिक विद्वेष, राजनीतिक और प्रशासनिक तंत्र के विभिन्न पहलुओं आदि का सूक्ष्मता से अध्ययन विश्लेषण किया जाना चाहिए। कभी भी कई विषयों को एक साथ मिला कर फीचर नहीं लिखा जाना चाहिए। इससे लक्ष्य नेपथ्य में चला जाता है। अक्सर जिन लोगों के पास विषय पर तैयारी मुकम्मल नहीं होती वे कई विषयों को आपस में मिला कर सामग्री पूरी करने की कोशिश करते हैं। इससे पाठकों को किसी भी विषय पर मुकम्मल जानकारी उपलब्ध नहीं होती, बल्कि वे कई विषयों के भंवर में उलझ कर रह जाते हैं। यह जरूरी है कि जिस भी विषय को उठाएं, उसके अलग–अलग पहलुओं पर क्रम से और तर्कपूर्ण बात करते चलें। ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि आपका ध्यान विषय पर केंद्रित तो हो लेकिन विभिन्न पहलू उलझते चले जाएं। इससे आप क्या कहना चाहते हैं, यह समझ में नहीं आ पाता। इसलिए तरीका यही होता है कि लिखने से पहले अलग से विभिन्न पक्षों के बारे में नोट्स ले लें और बिंदु रूप में उनका क्रम भी निर्धारित कर लें। इससे विषय पर समुचित तरीके से प्रकाश डाल पाने में सुविधा होती है और विषय के तथ्य और क्रम भी आपस में नहीं उलझते। कई बार ऐसा भी होता है कि आपने किसी विषय से संबंधित भरपूर तथ्य इकट्ठा कर लिए हैं, क्रम भी ठीक है, लेकिन फीचर में आप क्या कहना चाहते हैं यह स्पष्ट नहीं हो पाता? ऐसा भाषा पर अधिकार न होने के कारण होता है। इसलिए तथ्यों और अनुभवों के साथ–साथ भाषा पर अधिकार होना भी फीचर लेखन की आवश्यक शर्त है। जैसा कि आप जानते हैं, फीचर लेखन का कोई निर्धारित ढांचा नहीं होता लेखक अपनी भाषा और शैली के बल पर उसे रोचक, सरस और प्रवाहपूर्ण बना सकता है, जहां कथा शैली की जरूरत हो, जहां संस्मरणात्मक विवेचन की जरूरत हो वहां भी इस्तेमाल किया जाना चाहिए और जहां गंभीर तथ्यात्मक विश्लेषण की जरूरत हो वहां वैसा भी किया जा सकता है। इसलिए फीचर लेखन में कई तरह की भाषा और शैलियों का इस्तेमाल संभव है। कथात्मक या संस्मरणात्मक अंशों में साहित्यिक–काव्यात्मक भाषा–शैली का इस्तेमाल किया जा सकता है तो आंकड़ों के विश्लेषण–विवेचन में आर्थिक शब्दावली, वैज्ञानिक तथ्यों के विवेचन में विज्ञान और तकनीकी शब्दावली का उपयोग संभव है। लेकिन इस बात का ध्यान हमेशा रखा जाना चाहिए कि भाषा ऐसी हो जिसे समझने में साधारण से साधारण व्यक्ति को भी आसानी हो और वह विषय के बारे में बिना किसी अवरोध के जानकारी प्राप्त कर सके। एक उदाहरण से इसे आसानी से समझा जा सकता है –

''लोक हित के लिए बनाई गई योजनाओं में लोगों की बुनियादी आवश्यकताओं, रुचियों गांव की परिस्थितियों आदि का ध्यान नहीं रखा गया। परिणामस्वरूप ग्रामीण विकास योजनाएं ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विशेष परिवर्तन नहीं ला पाईं। इससे गरीबी, असमानता, बेरोजगारी एवं पलायन जैसी समस्याओं में और अधिक वृद्धि हुई। पारदर्शिता एवं सूचना के अभाव में योजनाओं तक पहुंच नहीं बन पाई। विकास कार्य ठेकेदारों, अफसरों, बिचौलियों के लाभ का साधन मात्र बनकर रह गए। ठेकेदारों से बात करने पर पता चलता है कि किसी भी निर्माण कार्य में 35 से 40 प्रतिशत तक

अधिकारियों को कमीशन देना पड़ता है। उसके बाद ठेकेदार का अपना लाभ। इस प्रकार निर्माण कार्य की गुणवत्ता का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है।''

स्थानीय स्वशासन में जन भागीदारी : विद्यासागर वाजपेयी
(पंचायती राज अपडेट, अगस्त 2005)

आपने देखा कि भाषा में कैसी सहजता है। हालांकि कुछ संस्कृतनिष्ठ शब्दों का उपयोग किया गया है लेकिन भाषा के प्रवाह में वे कथन को समझने में कहीं भी बाधक नहीं बनते। बातों और तथ्यों का क्रम सही तरीके से रखा गया है। जो बात जहां कही जानी चाहिए उसे वहीं सहज तरीके से कहा गया है।

16.5 सारांश

- ग्रामीण समस्याओं से अभिप्राय संपूर्ण ग्रामीण परिवेश, समाज, परंपराओं, संस्कृतियों में आ रहे बदलाव और विकृतियों से है। ग्रामीण विकास के नाम पर चलाई जा रही योजनाओं के क्रियान्वयन, स्थानीय शासन को मजबूत और स्वायत्त बनाने के चल रहे प्रयासों, आर्थिक विकास की गति, शिक्षा, रोजगार, कानून–व्यवस्था आदि के बारे में विश्लेषण–विवेचन से है।
- ग्रामीण समाज हालांकि मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है लेकिन वहां के जीवन से जुड़ी अनेक समस्याएं हैं। इनके आधार पर ग्रामीण फीचर के चार प्रकार निर्धारित किए जा सकते हैं–कृषि संबंधी, सामाजिक समस्याओं से संबंधित, ग्रामीण विकास और लोकजीवन से संबंधित।
- कृषि संबंधी फीचर में खेती और किसानों की दशा में सुधार लाने के मकसद से चलाई जा रही योजनाओं, उनकी पहुंच की स्थिति के बारे में विश्लेषण–विवेचन किया जाता है।
- कृषि के अलावा गांवों में अशिक्षा, अंधविश्वास, स्वास्थ्य और पोषाहार के प्रति जागरूकता की कमी जैसी अनेक समस्याएं हैं जिनकी वजह से ग्रामीण समाज का विकास प्रभावित होता है। इन समस्याओं के बारे में फीचर लेखन सामाजिक समस्याओं के अंतर्गत किया जाता है।
- शहरों की तुलना में गांवों में सड़क, बिजली, पेयजल, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, शैक्षणिक संस्थानों की उपलब्धता पर्याप्त नहीं है। जहां ये सुविधाएं हैं भी वे देखरेख और धन के अभाव में बदहाल हैं। इन समस्याओं के बारे में फीचर लेखन को ग्रामीण विकास संबंधी लेखन के अंतर्गत रखा जा सकता है।
- आधुनिक जीवन शैली का प्रभाव ग्रामीण समाज पर भी पड़ा है, जिससे वहां के रहन–सहन में कई तरह के बदलाव आए हैं। इससे पारंपरिक लोक कलाओं पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा है। कई लोक गायन, वादन, नाट्य और चित्रांकन शैलियां विलुप्त हो गई हैं या विलुप्ति के कगार पर हैं। लोक जीवन के विभिन्न पक्षों पर फीचर लेखन को लोकजीवन से संबंधित समस्याओं के अंतर्गत रखा जा सकता है।
- ग्रामीण समस्याओं पर फीचर, लेखन के लिए विषय के चुनाव तथ्यों के संग्रह और भाषा–शैली में विशेष सावधानी बरतने की जरूरत होती है। भाषा के उलझाव

और तथ्यों को क्रम से प्रस्तुत न कर पाने की स्थिति में फीचर दुरूह और अप्रभावी बन जाता है।

अभ्यास

1) ग्रामीण विकास संबंधी फीचर लेखन के लिए विषय का चुनाव करते समय किन–किन क्षेत्रों को ध्यान में रखा जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) क्या ग्रामीण समाज में आए किन बदलावों और विकृतियों को आप फीचर का विषय बना सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) लोक जीवन के कौन–कौन से पहलू फीचर लेखन के विषय हो सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

4) ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय किस तरह की तैयारी और सावधानी आवश्यक होती है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

16.6 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्नों –1

1) देखिए, भाग 16.2

2) दखिए, उपभाग 16.3.1

3) देखिए, उपभाग 16.3.2, उत्तर अपने शब्दों में लिखने का प्रयास कीजिए

बोध प्रश्न –2

1) देखिए, उपभाग 16.3.3 और उत्तर अपने शब्दों में लिखिए।

2) इकाई के अध्ययन के पश्चात अलग–अलग उपभागों में उपलब्ध दिशा निर्देश के आलोक में उत्तर लिखिए।

3) देखिए, उपभाग 16.3.4

- अभ्यास के लिए दिए गए प्रश्नों के उत्तर स्वयं लिखिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY